Con. 4. VIII.7.49
320

अंक 8
संख्या 7

मंगलवार
24 मई
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का प्रारूप..... 371-426

[अनुच्छेद 103 तथा 103-क पर विचार]

भारतीय संविधान-सभा

मंगलवार, 24 मई सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा की बैठक कांस्टिट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 8 बजकर दस मिनट में, अध्यक्ष महोदय (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) की अध्यक्षता में समवेत हुई।

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): श्रीमान्, क्या हम समय पर उपस्थित होने के लिये कोई उपाय कर सकते हैं? मुझे यह देखकर बहुत दुःख होता है कि हम अपना कार्य ग्यारह मिनट देर करके आरम्भ करते हैं। यह बुरी बात है। हमें समय पर उपस्थित होना चाहिये। कृपया आप इस प्रश्न पर विचार करें।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): इसके लिये हम लोग दोषी हैं। दोष हमारा है। हम लोग समय पर उपस्थित नहीं होते।

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त:** मध्यप्रांत की विधानसभा में मैंने एक बार यह किया कि मैं ठीक समय पर उपस्थित हुआ और जब मैंने यह देखा कि गणपूर्त्ति नहीं हुई थी तो मैंने माननीय सदस्यों से यह कहा कि मैं यह देखने के लिये पांच मिनट के लिये चला जाता हूं कि गणपूर्त्ति होती है या नहीं। एक ही बार मुझे ऐसा करना पड़ा और अब मुझे पांच सैंकड के लिये भी नहीं रुकना पड़ता है। यह एक बहुत चिंताजनक बात है कि यह आदरणीय सभा ग्यारह मिनट देर करके अपना कार्य आरम्भ करे।

***अध्यक्ष:** मुझे इसकी प्रसन्नता है कि माननीय सदस्य महोदय ने इस ओर ध्यान आकर्षित किया है। मैं स्वयं सभा भवन में बीस मिनट से रुका हुआ हूं। मुझे आशा है कि जो प्रश्न उठाया गया है उस पर माननीय सदस्य यथेष्ट ध्यान देंगे और मेरे लिये यह आवश्यक न होगा कि मध्यप्रांत की विधानसभा में जो कदम उठाया गया था उसे मैं भी उठाऊं। कल से हम लोग ठीक समय पर यहां उपस्थित हो जायें।

अब हम अनुच्छेद 103 को उठायेंगे।

संविधान का प्रारूप—(*जारी*)

अनुच्छेद 103

***मि. तजम्मुल हुसैन:** अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन एक बहुत साधारण संशोधन है। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (1) में 'Chief Justice' शब्दों के पूर्व 'Supreme' शब्द प्रविष्ट किया जाये।''

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[मि. तजम्मुल हुसैन]

अब मैं अनुच्छेद 103 का खंड (1) पढ़ता हूं:

> ''There shall be a Supreme Court of India consisting of a Chief Justice of India and such number of other judges not being less than seven as Parliament may by law prescribe.''

यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो संशोधित खंड इस प्रकार हो जायेगा:—

> ''There shall be a Supreme Court of India consisting of a Supreme Chief Justice of India, etc.''

इस अनुच्छेद के अनुसार उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति भारत का मुख्य न्यायाधिपति कहा जायेगा और प्रांतीय उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति ही मुख्य न्यायाधिपति कहा जायेगा। मेरी यह राय है कि इन दोनों में भेद किया जाना चाहिये। इसमें सन्देह नहीं उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति भारत का मुख्य न्यायाधिपति कहा गया है और उच्च न्यायालय का न्यायाधिपति केवल मुख्य न्यायाधिपति कहा गया है। किन्तु हमने भारत के प्रधानमंत्री और प्रांतीय प्रधान मंत्रियों में विभेद किया है। भारत का प्रधानमंत्री प्रधानमंत्री कहा जायेगा परन्तु प्रांतों के प्रमुख मुख्यमंत्री कहे जायेंगे। इसके अतिरिक्त भारत का महाधिवक्ता महान्यायावादी कहा जायेगा किन्तु प्रांतों में वह महाधिवक्ता ही कहा जायेगा। हमने इन नामों में भी विभेद किया है। भारत का महालेखा-परीक्षक, महालेखा-परीक्षक कहा जायेगा किन्तु प्रांतों में वह मुख्य लेखा-परीक्षक कहा जायेगा। इसलिये प्रांतीय उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति और प्रांतीय उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति में भेद करने के लिए हमें भारत के मुख्य न्यायाधिपति को केवल भारत का मुख्य न्यायाधिपति न कहकर भारत का उच्चतम मुख्य न्यायाधिपति कहना चाहिये। इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन उपस्थित करता हूं और मुझे आशा है कि वह स्वीकार कर लिया जायेगा।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (1) में 'and such number of other judges not being less than seven as Parliament may by law prescribe' शब्दों के स्थान में 'and until Parliament by law prescribes a larger number, of seven other judges' शब्द रखे जायें।''

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि उच्चतम न्यायालय का निर्माण उस समय तक के लिये स्थगित न किया जाये जब तक कि संसद विधि द्वारा न्यायाधीशों की संख्या निर्धारित न करे। इस संशोधन में यह उपबंध रखा गया है कि उच्चतम न्यायालय में सात न्यायाधीश होंगे।

(संशोधन संख्या 1815 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री कृष्णचन्द्र शर्मा:** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'Every Judge of the Supreme Court shall be appointed by the President by warrant under his hand and seal and shall hold office until he attains the age of sixty-five years:

Provided that in the case of appointment of a Judge, other than the Chief Justice, the Chief Justice of India shall always be consulted.' ''

श्रीमान्, अनुच्छेद 61 के साथ पढ़ने से मेरे संशोधन का वही अर्थ तथा उद्देश्य प्रकट हो जायेगा जो भारत सरकार के अधिनियम, 1935 की धारा 200 के उपबंधों का है। इस धारा के अधीन संघ न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति तथा अन्य न्यायाधीश सम्राट द्वारा नियुक्त होते हैं और यह समझा जाता है कि सम्राट अपने मंत्रियों के परामर्श से कार्य करता है। अनुच्छेद 61 के अधीन भारत का राष्ट्रपति अपने मंत्रियों के परामर्श लेकर अथवा उनके परामर्श देने पर कार्य करेगा। इसके अतिरिक्त श्रीमान्, संयुक्त राज्य अमेरिका में उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति वहां के प्रेसीडेंट द्वारा सीनेट के परामर्श से तथा उसकी सहमति से नियुक्त होता है अन्य उपनिवेशों में भी सम्राट का प्रतिनिधि मंत्रिमंडल से परामर्श लेकर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति तथा अन्य न्यायाधीशों को नियुक्त करता है। इसलिये मेरा संशोधन उस प्रथा के अनुरूप ही है जो अमरीका तथा अन्य उपनिवेशों में प्रचलित है और भारत सरकार के अधिनियम, 1935 में उपबन्धानित है। श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव को उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्ष:** दो और संशोधन अर्थात् संशोधन संख्या 1822 और 1823 हैं जिनका आशय बहुत कुछ एक समान है। मेरे विचार से इन संशोधनों को अलग-अलग उपस्थित करना आवश्यक नहीं है किन्तु मैं यह मान लेता हूं कि इनका आशय बहुत कुछ वही है जो संशोधन संख्या 1816 का है। हम उस संशोधन को उठायेंगे जो भाषा की दृष्टि से सबसे अच्छा है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रांत : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखे जायें:

'(2) The Chief Justice of Bharat, who shall be the Chief Justice of the Supreme Court, shall be appointed by the President subject to confirmation by two-thirds majority of the total number of members of Parliament assembled in a joint session of both the Houses of Parliament.'

'(3) Every judge of the Supreme Court, shall be appointed on the

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

advice of the Chief Justice of Bharat by the President under his hand and seal and shall hold office until he attains the age of sixty-five years:

Provided that:

(a) a judge may, by writing under his hand addressed to the President, resign his office;

(b) a judge may be removed from his office in the manner provided in clause (5).' ''

श्रीमान्, इस संशोधन में मैंने यह उपबंध रखा है कि उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त होगा किन्तु दोनों सभाओं के कम से कम दो तिहाई बहुमत द्वारा उसके निर्णय की पुष्टि आवश्यक होगी। इस समय खंड (2) में यह उपबंध है कि उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को राष्ट्रपति नियुक्त करेगा जिसका अर्थ यह है कि प्रधानमंत्री अथवा कार्यपालिका उसे नियुक्त करेगी। उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति का कार्यपालिका से किसी प्रकार का भी संबंध न होना चाहिये। इसी सिद्धांत को मैं इस धारा में प्रविष्ट करना चाहता हूं। वर्तमान व्यवस्था के अधीन कार्यपालिका ही उसे अस्तित्व में लायेगी। राष्ट्रपति उसे प्रधानमंत्री से परामर्श लेकर नियुक्त करेगा। इससे उच्चतम न्यायालय के स्वातंत्र्य का कुछ अंश में अपहरण हो जायेगा। हम इस समय देश के सर्वोच्च न्यायाधिकरण के लिये उपबंध बना रहे हैं। इस न्यायाधिकरण को किसी प्रकार भी सन्देह की दृष्टि से न देखा जाना चाहिये और किसी भी कार्यपालिका का उस पर प्रभाव न पड़ना चाहिये। यदि मुख्य न्यायाधिपति को राष्ट्रपति अथवा प्रधानमंत्री नियुक्त करता है तो उसका स्वातंत्र्य सीमित हो जाता है। इसलिये श्रीमान्, मैं यह चाहता हूं कि मुख्य न्यायाधिपति को राष्ट्रपति अवश्य नियुक्त करेगा परन्तु संसद के कम से कम दो तिहाई सदस्य उसके निर्णय की पुष्टि करेंगे। इसका अर्थ यही है कि किसी व्यक्ति की नियुक्ति का प्रस्ताव राष्ट्रपति ही करेंगे किन्तु यदि संसद के दो तिहाई सदस्य उनके प्रस्तावित नाम को स्वीकार न करें तो कोई ऐसा दूसरा नाम प्रस्तावित किया जायेगा जो दोनों सभाओं के दो तिहाई सदस्यों को स्वीकार्य हो। इस प्रकार राष्ट्रपति को भी कार्य करने की कुछ शक्ति प्राप्त होगी। वही नामों को प्रस्तावित करेंगे किन्तु वही नाम स्वीकार किया जायेगा जो दोनों सभाओं के दो तिहाई सदस्यों को मान्य होगा। राष्ट्रपति को प्रस्ताव उपस्थित करने की स्वतंत्रता होगी किन्तु जो व्यक्ति चुना जायेगा वह विधानमंडल की दोनों सभाओं का विश्वास भाजन होगा। इस प्रणाली से दो लाभ होंगे। इससे कार्यपालिका को यह अधिकार रहेगा कि वह जिस किसी व्यक्ति को योग्य समझेगी उसे चुनेगी किन्तु वह किसी दल-विशेष की भावना से प्रेरित होकर यह कार्य नहीं करेगी किन्तु उसे इस प्रकार करेगी कि दोनों सभाओं के सभी सदस्य अथवा कम से कम दो तिहाई सदस्य उसके प्रस्तावित नाम को स्वीकार करेंगे। इसलिये श्रीमान्, मैं जिस उपबंध का प्रस्ताव कर रहा हूं वह उस उपबंध से कहीं अच्छा है जो इस समय मसौदे में समाविष्ट है। इस समय श्रीमान् न्यायाधीशों

को नियुक्त करने के लिये भी यह आवश्यक नहीं है कि केवल उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श लिया जाये किन्तु उन्हें उच्चतम मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श लेकर नियुक्त किया जाता है जिसका अर्थ यह है कि उनकी नियुक्ति में भी मुख्यतया कार्यपालिका का ही हाथ होता है। श्रीमान्, मेरे विचार से इस प्रकार की व्यवस्था न रहनी चाहिये। उच्चतम न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश केवल उच्चतम न्यायाधीश के परामर्श से ही नियुक्त किया जाना चाहिये ताकि उन्हें केवल मुख्य न्यायाधिपति से अधिकार प्राप्त हो न कि कार्यपालिका से। मेरे विचार से श्रीमान्, यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात है और इसे हमारे संविधान में स्थान दिया जाना चाहिये। हम हमेशा से यह कहते आये हैं कि हमें एक स्वाधीन न्यायपालिका की आवश्यकता है। अन्य देशों के बहुत से लोग इस बात पर गर्व करते हैं और संयुक्त राज्य अमरीका को भी इसका गर्व है। मेरे विचार से हम भी यह चाहते हैं कि मुख्य न्यायाधिपति तथा उच्चतम न्यायालय पर किसी प्रकार का सन्देह न किया जा सके। उन्हें पूर्णतया स्वाधीन होना चाहिये ताकि प्रत्येक व्यक्ति को यह विश्वास रहे कि उन पर कार्यपालिका का कोई भी प्रभाव न पड़ेगा। मेरे विचार से मेरा संशोधन बहुत महत्त्वपूर्ण है और इसलिये मुझे यह आशा है कि इस सभा के सदस्य मसौदे में इस उद्देश्य से कुछ परिवर्तन कर लेंगे कि उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति को केवल कार्यपालिका ही अस्तित्व में न लाये और राष्ट्रपति उसी की सिफारिश के आधार पर उसे नियुक्त न करे।

श्रीमान्, मेरी यह धारणा है कि उच्च न्यायालयों से परामर्श लेने के संबंध में यह उपबंध एक जीर्ण रूढ़ि है। राज्यों के संघ में समाविष्ट होने के कारण अब उनका स्वतंत्र अस्तित्व न रह जायेगा। जब उन्हें यह पद प्राप्त नहीं था। तो यह उपबंध साार्थक कहा जा सकता था परन्तु अब इसके लिये कोई स्थान नहीं रह गया है। श्रीमान्, मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर इसे निकाल देंगे और समयोचित व्यवस्था करेंगे। इस प्रकार हमें एक स्वाधीन न्यायपालिका प्राप्त हो जायेगी और उसका कार्यपालिका से किसी प्रकार का संबंध न रह जायेगा। मैंने यह उपबंध रखा है कि राष्ट्रपति ही कार्य करेगा, जिसका अर्थ यह है कि कार्यपालिका को यह अधिकार प्राप्त होगा कि वह नामों को प्रस्तावित करे किन्तु इन नामों में से विधानसभा में अर्थात् दोनों सभाओं के संयुक्त सत्र में दो तिहाई बहुमत से यथोचित नाम यथोचित रूप से चुना जायेगा। श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव को उपस्थित करता हूं।

(संशोधन संख्या 1818 उपस्थित नहीं किया गया।)

***मि. बी. पोकर साहब** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) और खंड (2) के प्रथम परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:
>
> '(2) Every judge of the Supreme Court other than the Chief Justice of India shall be appointed by the President by warrant under his hand

[मि. बी. पोकर साहब]

> and seal after consultation with the judges of the Supreme Court and Chief Justices of High Courts in the States and with the concurrence of the Chief Justice of India; and the Chief Justice of India shall be appointed by the President by a warrant under his hand and seal after consultation with the judges of the Supreme and the Chief Justices of the High Court in the States and every judge of the Supreme Court shall hold office until he attains the age of sixty-eight years.' ''

श्रीमान्, मैंने इस संशोधन को इस बात को सामने रखकर उपस्थित किया है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति पर किसी प्रकार का राजनैतिक प्रभाव न पड़े। इसी विचार से मैंने इस संशोधन को उपस्थित किया है और मेरे इस विचार की पुष्टि संघ न्यायालय तथा विभिन्न उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधिपतियों द्वारा इस सभा को दी हुई सम्मति से होती है। तत्संबंधी ज्ञापन इस सभा के माननीय सदस्यों को दिया गया था। श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं उस ज्ञापन के कुछ वाक्यों को पढ़ता हूं। उसमें कहा गया है:

''यह ज्ञात हुआ है कि एक प्रांतीय सरकार ने यह आदेश किया है कि मुख्य न्यायाधिपति की सिफारिशों को प्रधानमंत्री के पास न भेजकर मुख्य सचिव (चीफ सेक्रेटरी) के पास भेजना चाहिये और कुछ मामलों में उसने सहायक सचिव (असिस्टेंट सेक्रेटरी) से कहा है कि वह इस संबंध में उच्च न्यायालय से आगे लिखा पढ़ी करे। इस प्रकार यह प्रवृत्ति अधिकाधिक बढ़ती हुई दिखाई दे रही है कि उच्च न्यायालय को प्रांतों के गृह विभाग का एक अंग समझा जाये। इस प्रवृत्ति से उच्च न्यायालयों की प्रतिष्ठा को हानि पहुंचना अवश्यम्भावी है जिसके फलस्वरूप वे लोगों की दृष्टि में गिर जायेंगे और इसलिये इसे रोकने के लिये एक सम्मेलन में समवेत न्यायाधीशों ने एक मत से यह निर्णय किया कि उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में निम्नलिखित प्रणाली अपनाई जाये:

> ''इस संबंध में मुख्य न्यायाधिपति अपनी सिफारिशें सीधे-सीधे राष्ट्रपति के पास भेजे। राज्यपाल से परामर्श लेकर राष्ट्रपति को भारत के मुख्य न्यायाधिपति का समर्थन प्राप्त करके नियुक्तियां करनी चाहियें।''

इस प्रणाली के अधीन इसकी आवश्यकता न रह जायेगी कि उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति प्रधानमंत्री से तथा गृह मंत्री से परामर्श करे और उन्हें समझाये कि उसकी सिफारिशें ठीक हैं। इसके अधीन उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति की सिफारिशें नियुक्त करने वाले अधिकारी अर्थात् राष्ट्रपति के सम्मुख हमेशा रखी जायेंगी। भारत के मुख्य न्यायाधिपति से समर्थन प्राप्त करने से इस संबंध में उच्च स्तर पर कोई राजनैतिक प्रभाव अथवा किसी दल विशेष का प्रभाव न पड़ सकेगा।''

उसमें आगे यह कहा गया है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में भी आवश्यक परिवर्तनों के साथ यही सिद्धांत अपनाये जायें। उसी ज्ञापन में यह भी कहा गया है कि:

> ''इसलिये यह सुझाव रखा जाता है कि अनुच्छेद 193 (1) में निम्नलिखित अथवा कोई अन्य यथोचित शब्द रखे जायें:
>
> 'Every Judge of the High Court shall be appointed by the President by a warrant under his hand and seal on the recommendation of the Chief Justice of the High Court after consultation with the Governor of the State and with the concurrence of the Chief Justice of India.' ''

उसमें आगे यह भी कहा गया है कि:

> ''उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में भी आवश्यक परिवर्तनों के साथ उपरोक्त अपनाया जाये। अनुच्छेद 103 (2) को भी यथोचित रूप से संशोधित किया जाये।''

श्रीमान्, मेरा यह निवेदन है कि इस उपबंध को स्वीकार करने के पूर्व इस सभा को एक सम्मेलन में समवेत विभिन्न उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधिपतियों तथा संघ न्यायालय के न्यायाधीशों की सम्मति को यथेष्ट महत्त्व देना चाहिये। यह एक बहुत महत्त्व की बात है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश यह न समझें कि उनका अस्तित्व अथवा उनकी नियुक्ति किसी राजनैतिक विचारधारा अथवा किसी राजनैतिक दल की इच्छा पर निर्भर है। इसलिये वह आवश्यक है कि इन नियुक्तियों पर राजनैतिक प्रभाव न पड़ने देने के लिये सुदृढ़ रक्षा कवच होना चाहिये। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि कोई न्यायाधीश किसी राजनैतिक दल के प्रभाव से नियुक्त हुआ हो तो वह न्यायाधीश के रूप में कार्य करते समय अथवा एक साधारण व्यक्ति के रूप में व्यवहार करते समय उस प्राधिकारी के विचारों का अवश्य ही आदर करेगा जिसने उसे नियुक्त किया हो। इसे सभी मानेंगे कि न्यायाधीशों का किसी प्रकार की राजनैतिक विचारधारा से संबंध न होना चाहिये। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि प्रस्तावित कार्यप्रणाली में जो मुख्य शर्त रखी गई है वह पूरी की जानी चाहिये अर्थात् उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करने में भारत के मुख्य न्यायाधिपति की सहमति प्राप्त की जानी चाहिये। इस ज्ञापन में इस पर जोर दिया गया है और यह एक ऐसा उत्कृष्ट सिद्धांत है कि इसे सभा को स्वीकार कर ही लेना चाहिये। श्रीमान्, मेरा यह निवेदन है कि यह एक महत्त्वपूर्ण बात है कि राष्ट्रपति को मुख्य न्यायाधिपति के सहकारियों को नियुक्त करने के पूर्व उससे परामर्श ही न लेना चाहिये बल्कि उसकी सहमति भी प्राप्त कर लेनी चाहिये। इस ज्ञापन में इस पर बहुत जोर दिया गया है कि यह परमावश्यक है कि न्यायाधीशों को राजनैतिक प्रभावों से अछूता रखा जाये। इसमें सन्देह नहीं कि इस कार्यप्रणाली के अधीन यह भी रखा गया है कि राज्य के राज्यपाल

[मि. बी. पोकर साहब]

से भी परामर्श लिया जाना चाहिये किन्तु यह अधिक महत्व की बात नहीं है। यह संभव है कि राज्यपाल भी किसी प्रकार के राजनैतिक विचार रखता हो। इसलिये अपने संशोधन में मैंने राज्यपाल के नाम को स्थान नहीं दिया है। इसे सभी मानेंगे कि न्यायपालिका पर किसी राजनैतिक दल का अथवा किसी राजनैतिक विचारधारा का प्रभाव न पड़ना चाहिये। न्यायपालिका का कार्यपालिका से किसी प्रकार का संबंध न रखने के बारे में कल जो वाद-विवाद हुआ था उसमें मैं इस समय नहीं पड़ना चाहता। सभा को इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये और मुझे आशा है कि माननीय विधि मंत्री समस्या के इस अंग पर गम्भीरता से विचार करेंगे विशेषतया इसलिये कि उपरोक्त सिफारिशें संघ न्यायालय के न्यायाधीशों तथा उच्चतम न्यायालयों के न्यायाधीशों के सम्मेलन की ओर से की गई है। श्रीमान्, मेरे विचार से संघ न्यायालय के न्यायाधीश और विभिन्न न्यायालयों के मुख्य न्यायाधिपतियों के इस सम्मेलन के अतिरिक्त इस विषय पर अन्य कोई ऊंचा प्राधिकारी मिल नहीं सकता।

अपने संशोधन में मैंने जो दूसरी बात उठाई है वह यह है कि उच्चतम न्यायाधीशों की पदनिवृत्ति की आयु बढ़ाकर 68 वर्ष कर देनी चाहिये। कुछ वर्षों से यह देखा जाता रहा है कि उच्च न्यायालयों के बहुत से ऐसे न्यायाधीश जो स्वस्थ होते हैं और आगे कई वर्षों तक काम कर सकते हैं साठ वर्ष की आयु में ही निवृत्त कर दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इस ज्ञापन में इसके लिये बहुत ही सबल कारण बताये गये हैं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की निवृत्ति की आयु बढ़ाकर अड़सठ वर्ष क्यों कर देनी चाहिये। इस ज्ञापन में यह कहा गया है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की निवृत्ति की आयु में और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की निवृत्ति की आयु में तीन से लेकर पांच वर्ष तक का अन्तर होना चाहिये। इसी ज्ञापन में यह भी कहा गया है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की निवृत्ति की आयु पैंसठ वर्ष निश्चित की जाये। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की निवृत्ति की आयु पर उस समय पर विचार-विमर्श किया जायेगा जब तत्संबंधी अनुच्छेद विचारार्थ उठाये जायेंगे। श्रीमान्, मेरी यह धारणा है कि उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की निवृत्ति की आयु बढ़ाकर बासठ अथवा त्रेसठ वर्ष रख दी जाये और संघ न्यायालय तथा भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधिपतियों की सिफारिश के अनुसार उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की निवृत्ति की आयु बढ़ाकर अड़सठ वर्ष रख दी जाये। श्रीमान्, मेरा यह निवेदन है कि माननीय विधि-मंत्री इस प्रश्न पर बहुत गंभीरता से विचार करें क्योंकि इस देश के सर्वोच्च न्याय संबंधी प्राधिकारी की सिफारिशों से मेरे संशोधन का समर्थन होता है।

(संशोधन संख्या 1820 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामत:** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): संशोधन संख्या 1821 का उद्देश्य केवल मसौदे के दोषों को दूर करना है। इसलिये मैं चाहता हूं कि मसौदा-समिति उस पर विचार करे।

***अध्यक्ष:** जैसा कि मैं कह चुका हूं संशोधन संख्या 1822 और 1823 का आशय संशोधन संख्या 1816 से पूरा हो गया है और वह उपस्थित किया जा चुका है।

***प्रो. के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'with' शब्द के बाद 'the Council of States and' शब्द रखे जायें।''

संशोधित खंड इस प्रकार हो जायेगा:

> ''Every judge of the Supreme Court shall be appointed by the President by warrant under his hand and seal after consultation with the Council of States and such of the judges of the Supreme Court and of the High Courts in the States as may be necessary for the purpose and shall hold office until he attains the age of sixty-five years.''

श्रीमान्, इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति पर किसी प्रकार का प्रभाव न पड़े। मेरा संशोधन इस प्रकार है कि यदि राष्ट्रपति नियुक्ति करेगा तो वह स्वभावत: प्रधानमंत्री के परामर्श से नियुक्ति करेगा। श्रीमान्, आदरपूर्वक मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि न्यायाधीशों, राजदूतों अथवा राज्यपालों की नियुक्ति के संबंध में इस संविधान द्वारा प्रधानमंत्री को इतनी शक्ति तथा प्रभाव प्रदान किया गया है कि यदि वह चाहे तो स्वेच्छाचारी शासक हो सकता है। मेरे विचार से कुछ ऐसे विषय हैं जिन पर राजनीति का अथवा राजनैतिक दलों का प्रभाव न पड़ने देना चाहिये। यह भी एक ऐसा ही विषय है। मेरे विचार से उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को इस प्रकार के प्रभाव से अछूता रखना चाहिये। इसलिये मेरा सुझाव यह है कि न्यायाधीशों को नियुक्त करने में राष्ट्रपति केवल न्यायपालिका से ही परामर्श न ले किन्तु राज्य परिषद् से भी परामर्श ले ताकि दलबंदी की मनोवृत्ति समाप्त हो जाये अथवा कम हो जाये और किसी प्रकार का राजनैतिक प्रभाव भी न पड़ने पाये।

इस सुझाव की पुष्टि इस तर्क से भी होती है कि जिस प्रकार अर्थ-संबंधी शक्तियों के संबंध में अवर सभा को अर्थात् लोक सभा को उच्चतम अधिकार प्राप्त है उसी प्रकार ऐसे विषयों के संबंध में अर्थात् उच्च पदों के लिये शक्ति के संतुलन की दृष्टि से नियुक्ति करने के लिये मेरे विचार से राज्य-परिषद् से परामर्श लेना चाहिये ताकि इस कार्य में किसी प्रकार का प्रभाव न पड़ने पाये क्योंकि यदि प्रधानमंत्री ही राष्ट्रपति को इन विषयों के संबंध में परामर्श देगा तो कई प्रकार से प्रभाव पड़ने की संभावना है।

मेरे विचार से राज्य-परिषद् जो राज्यों की तथा कुछ हितों की प्रतिनिधि सभा होगी, इस विषय के संबंध में एक संतुलित दृष्टिकोण अपना सकेगी। इसलिये ऐसे विषयों के संबंध में राज्य-परिषद् का राष्ट्रपति को परामर्श देना किसी प्रकार आपत्तिजनक न होगा।

इस संबंध में संयुक्त राज्य अमरीका का दृष्टांत दिया जा सकता है। यद्यपि अमरीका का संविधान उस सिद्धांत पर आधृत नहीं है जो इस मसौदे में सन्निहित है किन्तु ऐसे विषयों में वहां की सीनेट का हाथ रहता है। इस विषय के संबंध में वहां के दृष्टांत

[प्रो. के.टी. शाह]

का अनुसरण करके हमें लाभ होगा और हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि उच्चतम न्यायपालिका की रचना के संबंध में राज्य-परिषद् राष्ट्रपति को परामर्श दे। मुझे आशा है कि मेरा सुझाव स्वीकार किया जायेगा।

(संशोधन संख्या 1825, 1826 और 1828 उपस्थित नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1827 के आशय की पूर्त्ति अन्य संशोधनों से हो गई है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'may be' शब्दों के स्थान में 'the President may deem' शब्द रखे जायें।''

इस समय यह खंड जिस रूप में है उसके अधीन 'may be' शब्द किसी न्यायालय के सम्मुख उपस्थित किये जा सकते हैं क्योंकि किसी को इस आवश्यकता का निर्णय करना ही होगा। मैंने यह संशोधन इस उद्देश्य से उपस्थित किया है कि राष्ट्रपति स्वविवेक से यह निर्णय करे कि किन न्यायाधीशों से परामर्श लेना आवश्यक होगा। मेरे विचार से यह संशोधन आवश्यक है क्योंकि अन्यथा यह शब्द अस्पष्ट ही रह जायेंगे।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1830 और 1831 के आशय की पूर्त्ति संशोधन संख्या 1829 से हो चुकी है।

***प्रो. के.टी. शाह:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'until he attains the age of sixty-five years' शब्दों के स्थान में 'during good behaviour or until he resigns; provided that any such Judge may resign his office at any time after 10 years of service in a judicial office and if he so resigns, he shall be entitled to such pension as may be allowed under the law passed by the Parliament of India for the time being in force' शब्द रखे जायें।''

संशोधित खंड इस प्रकार हो जायेगा:

> ''Every judge of the Supreme Court shall be appointed by the President by warrant under his hand and seal after consultation with such of the judges of the Supreme Court and of the High Courts in the States as may be necessary for the purpose and shall hold office during good

behaviour or until he resigns; provided that any such Judge may resign his office at any time after 10 years of service in a judicial office and if he so resigns, he shall be entitled to such pension as may be allowed under the law passed by the Parliament of India for the time being in force.''

इस प्रकार भी मैं न्यायपालिका को पूर्ण रूप से स्वाधीन करना चाहता हूं। इसका आशय यह है कि नियुक्तियां किसी निश्चित अवधि अथवा निर्धारित आयु के लिये नहीं की जायेंगी जिसे समाप्त करके किसी न्यायाधीश को अवश्य ही निवृत्त होना होगा किन्तु, जैसा कि इंग्लैंड में होता है और अभी हाल तक संयुक्त राज्य अमरीका में भी होता आया है, न्यायाधीशों को जीवनकाल के लिये नियुक्त किया जाना चाहिये। उन्हें इस प्रकार के भय से पीड़ित न रहना चाहिये कि सरकार के अथवा कार्यपालिका के रुष्ट होने पर उन्हें अपने पद से हटा दिया जायेगा। उन्हें इस भय से पीड़ित न रहना चाहिये कि उन्हें फिर न्यायालयों में वकालत करके अपनी जीविका उपार्जन करनी होगी अथवा किसी ऐसी उपजीविका को अपनाना होगा जो न्यायाधीशों के अनुरूप न हो अथवा जिससे उनकी स्वाधीनता और चरित्र पर प्रभाव पड़े।

इसलिये मेरा यह सुझाव है कि जैसा कि इंग्लैंड में होता है और अभी हाल तक संयुक्त राज्य अमरीका में भी होता आया है। चाल-चलन ठीक होने पर न्यायाधीशों को बहुत कुछ जीवन पर्यन्त पदासीन रहने देना चाहिये।

किन्तु यदि कोई न्यायाधीश यह अनुभव करे कि मानसिक अथवा शारीरिक दोर्बल्य के कारण यह अपने कृत्यों का पालन अथवा यथेष्ट रूप से पालन नहीं कर सकता है तो मेरा यह सुझाव है कि दस वर्ष तक न्यायाधीश रहने के उपरांत वह पदत्याग कर सकता है। मेरा यह भी सुझाव है कि पदत्याग करने के उपरांत उसे अपनी साधारण आजीविका के संबंध में किसी प्रकार की चिन्ता न रहे। अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक स्थिति के संबंध में उसे पूर्ण प्रतिभूति प्राप्त होनी चाहिये और इसलिये उसे यथोचित निवृत्ति-वेतन मिलना चाहिये।

पद त्याग के उपरांत दिये जाने वाले निवृत्ति-वेतन का संसद को विधि द्वारा किसी विशेष न्यायाधीश के लिये नहीं बल्कि साधारणतया सभी न्यायाधीशों के लिये निश्चित करना चाहिये। चाहे जो भी विधि प्रवर्त्तन में हो किन्तु उसके अधीन किसी निवृत्ति न्यायाधीश को दस वर्ष तक सेवा करने के उपरांत निवृत्ति-वेतन मिलना चाहिये।

मेरा यह मत है कि इस प्रकार के न्यायाधीशों को निवृत्ति वेतन के रूप में वही धनराशि दी जानी चाहिये जो वे पदासीन होने की अवस्था में वेतन के रूप में पाते थे ताकि उनके लिये आजीविका उपार्जन के लिये किसी अन्य उपजीविका, वृत्ति अथवा सेवा को अपनाने का प्रलोभन न रह जाये। यदि उनका वेतन उनके जीवन स्तर को बनाये रखने के लिये पर्याप्त था तो उन्हें उसी प्रकार का निवृत्ति-वेतन भी मिलना चाहिये।

यह मेरी अपनी सम्मति है और मैं यह नहीं चाहता कि संविधान में इसका समावेश हो किन्तु मेरा यह सुझाव है कि इस संबंध में संसद विधि बनाये। इस सभा में मैं इसी उच्चतम सिद्धांत पर जोर देता रहा हूं कि यह आवश्यक है कि न्यायाधीशों को पूर्ण स्वाधीनता

[प्रो. के.टी. शाह]

प्राप्त है। अपने पिछले संशोधन में उनकी नियुक्ति की कार्यप्रणाली निश्चित करके मैंने उन्हें स्वाधीनता प्राप्त कराने का प्रयास किया है और इस संशोधन द्वारा चरित्र अच्छा रहने पर उनके बहुत कुछ जीवन पर्यन्त पदासीन रहने की व्यवस्था करके भी मैंने यही प्रयास किया है। यदि किसी कारण कोई न्यायाधीश निवृत्त होना चाहे अथवा बिना किसी दोषारोप के उसे पद से हटाना आवश्यक हो तो उसे इतना निवृत्ति वेतन दिया जाना चाहिये कि वह अपने अवशिष्ट जीवनकाल में समृद्धिशाली जीवन न सही किन्तु कम से कम स्वाधीनता से सुख-शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके। श्रीमान, यह एक बहुत ही साधारण सिद्धांत है और मुझे आशा है कि इस पर किसी प्रकार की आपत्ति न की जायेगी और मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जायेगा।

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रांत : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'sixty-five' शब्द के स्थान पर 'sixty' शब्द रखा जाये और 'The President, however, may in any case extend from year to year the age of retirement up to sixty-five years' शब्द जोड़ दिये जायें।''

श्रीमान्, मैंने तीन कारणों को ध्यान में रखकर यह संशोधन उपस्थित किया है। एक कारण तो यह है कि सरकारी सेवकों के संबंध में निवृत्ति की आयु 55 वर्ष रखी गई है किन्तु उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये वह बढ़ाकर साठ वर्ष कर दी गई है। मुझे इसके लिये कोई कारण नहीं दिखाई देता कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में उसे बढ़ाकर 65 वर्ष कर दिया जाये। बहुत काल तक सेवा करने के उपरान्त उन्हें निवृत्त हो जाना चाहिये और अन्य लोगों के लिये स्थान रिक्त कर देना चाहिये। मुझे यह ज्ञात है कि मुख्य न्यायाधिपतियों ने कुछ समय पूर्व एक सम्मेलन में समवेत होकर यह सिफारिश की थी कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की निवृत्ति की आयु 65 वर्ष होनी चाहिये। उस सम्मेलन की कार्यवाही देखने से मुझे यह पता लगा कि विद्वान् न्यायाधीशों ने इसके लिये कोई तर्कपूर्ण कारण नहीं बताये हैं। मुख्यत: उन्होंने यही कारण बताया है कि यदि निवृत्ति की आयु बढ़ाकर 65 वर्ष न की जाये तो उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के लिये उच्चतम न्यायालय में पद स्वीकार करने के लिये पर्याप्त आकर्षण नहीं रहेगा। मुझे यह स्वीकार करना पड़ता है कि विद्वान् मुख्य न्यायाधिपतियों के तर्क को देखकर मुझे बहुत खिन्नता का अनुभव हुआ। हमें केवल इसलिये कि उच्च न्यायालयों के ऐसे न्यायाधीशों के लिये आकर्षण रहेगा, जिन्हें धन से ही सबसे अधिक प्रेम है। मुख्य न्यायाधिपतियों की इस सिफारिश को स्वीकार न करना चाहिये।

दूसरा कारण यह है और उसे बताते हुए मैं इस सभा के साठ वर्ष से अधिक आयु के माननीय सदस्यों के प्रति अपना आदरभाव प्रकट कर देना चाहता हूं कि प्राय: साठ वर्ष के बाद लोगों में इतना शारीरिक तथा मानसिक बल नहीं रह जाता कि वे उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के कठिन कार्य को संभाल सकें। मुझे यह ज्ञात है कि उच्च न्यायालयों में कुछ ऐसे न्यायाधीश भी रहे जिन्हें साठ वर्ष की आयु के पूर्व ही इतने मानसिक दोर्बल्य

का शिकार होना पड़ा है कि वे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के कृत्यों का पालन यथेष्ट रूप से नहीं कर सके हैं। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के प्रति आदर प्रकट करते हुए मैं कहना चाहता हूं कि कभी हमने यह भी देखा है कि अधिवक्ता तो बोलता जा रहा है किन्तु वे अपने खर्राटे ले रहे हैं।

***अध्यक्षः** इसका आयु से संबंध नहीं है।

***श्री जसपतराय कपूरः** हमेशा नहीं। श्रीमान्, इसमें कोई संदेह नहीं। मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि कभी ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति जो साठ वर्ष की आयु का होने जा रहा हो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के कठिन कर्त्तव्यों का पालन नहीं कर सकता और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के कर्त्तव्यों का तो पालन कर ही नहीं सकता। मैं यह जानता हूं कि यह सभी लोगों के संबंध में नहीं कहा जा सकता परन्तु मैं यह कहूंगा कि कभी ऐसा भी होता ही है इसलिये मेरा यह निवेदन है कि यदि हम यह नियम निश्चित कर देते हैं कि उच्चतम न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक पदासीन रहेगा तो यह उचित न होगा। मैं यह जानता हूं कि निस्संदेह इस सभा में बहुत से ऐसे सदस्य हैं जो साठ वर्ष के हो चुके हैं किन्तु जो देश के भूषण हैं। किन्तु प्रत्येक व्यक्ति का शरीर तथा मस्तिष्क इतना स्वस्थ नहीं होता।

इसके अतिरिक्त श्रीमान्, तीसरा कारण यह है कि और यह सबसे महत्त्वपूर्ण कारण है कि जिस व्यक्ति ने साठ वर्ष की आयु तक सेवा की हो और सरकार से सुन्दर उपलब्धियां प्राप्त की हों उसे निवृत्ति होने के लिये तथा समाज के लिये अवैतनिक रूप में कार्य करने के लिये तैयार रहना चाहिये। समाज प्रत्येक ऐसे व्यक्ति से, जो साठ वर्ष की आयु का हो गया हो, यह आशा करता है कि वह समाज के उत्थान के लिये अवैतनिक रूप से कार्य करे। श्रीमान्, हमारे देश में प्राचीनकाल में लोग अपने सामने यह आदर्श रखते थे कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन के चतुर्थाश्रम के सन्यासी हो जाना चाहिये और अकिंचन होकर समाज सेवा करनी चाहिये। हमारे पूर्वाचार्यों ने हमारे सामने यह आदर्श रखा है। श्रीमान्, मेरे विचार से यह कोई बड़ी बात नहीं है कि हम प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा करें और विशेषकर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के समान विद्वान लोगों से यह आशा करें कि वे साठ वर्ष की आयु के उपरांत अवैतनिक रूप से देश सेवा करके लोगों के सामने एक अच्छा उदाहरण रखें। मेरे हृदय में प्रायः यह विचार उठता है कि सरकारी सेवकों को, निवृत्ति पश्चात् जब वे निवृत्ति वेतन पाते हैं और आजीविका उपार्जन की चिंता से मुक्त रहते हैं, किसी रचनात्मक कार्य में लगकर अवैतनिक रूप से समाज सेवा करनी चाहिये। यदि वे ऐसा करें तो हमें विभिन्न कार्य क्षेत्रों में बहुत से सुयोग्य समाज सेवक उपलब्ध हो जाएं। किंतु इस संशोधन में यह नहीं कहा गया है कि साठ वर्ष की आयु के उपरांत न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय में पदासीन रहे ही नहीं। मैंने केवल यह कहा है कि साधारणतया साठ वर्ष की आयु प्राप्त होने पर वे निवृत्त कर दिये जायेंगे किन्तु यदि राष्ट्रपति यह समझे कि कोई न्यायाधीश बहुत ही योग्य है और सुयोग्य न्याय प्रशासन के लिये उसे रखना आवश्यक है तो वह पैंसठ वर्ष की आयु तक पदासीन रखा जा सकता है किन्तु प्रत्येक वर्ष उसकी पदावधि बढ़ाई जायेगी। मुझे आशा है कि डा. अम्बेडकर तथा यह सभा इस संशोधन को स्वीकार करेंगे।

(संशोधन संख्या 1834 और 1835 उपस्थित नहीं किये गये।)

***श्री सतीश चन्द्र** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'until he attains the age of 65 years' शब्दों के स्थान में 'for such period as may be fixed in this behalf by Parliament by law' शब्द रखे जायें।''

इस खंड में जो आयु निश्चित की गई है उसके संबंध में बहुत वाद-विवाद उठ खड़ा हुआ है। मेरे माननीय मित्र मि. पोकर साहब, मि. नजीरुद्दीन अहमद तथा मि. महबूबअली बेग यह चाहते हैं कि वह बढ़ाकर अड़सठ वर्ष कर दी जाये किन्तु श्री जसपतराय कपूर और श्री मोहनलाल गौतम यह चाहते हैं कि वह कम करके साठ वर्ष रख दी जाये। मेरे विचार से हमारे संविधान में यत्र तत्र बहुत अनुच्छेदों में अनावश्यक रूप से आयु निश्चित कर दी गई है। आयु का प्रश्न आगे की संसदों के लिये छोड़ा जा सकता है और वे ही काल विशेष की स्थिति को देखकर तथा आवश्यकताओं को समझकर इस संबंध में निर्णय करेंगी। श्री जसपतराय कपूर ने जो कुछ कहा है उससे मैं सबसे अधिक सहमत हूं। उन्होंने जो तर्क उपस्थित किये हैं उन्हें मैं दुहराना नहीं चाहता। मेरी यह धारणा है कि चूंकि इस सभा में अधिकतर वयोवृद्ध सज्जन हैं इसलिये कई स्थानों में ऐसी आयु निश्चित की गई है जिससे नवयुवकों के प्रति न्याय नहीं हो सका है। विधान-मंडलों की सदस्यता के लिये हमारे संविधान में जो आयु-सीमा निश्चित की गई है वह संसार में ऊंची से ऊंची आयु-सीमा है और यदि संसद के उच्च सदन की सदस्यता के संबंध में एक संशोधन स्वीकार न किया जाता तो वह आयु-सीमा संसार की सबसे ऊंची आयु-सीमा होती। मुझे आशा है कि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जायेगा और यह भविष्य की संसद के लिये छोड़ दिया जायेगा कि वह इस संबंध में आयु-सीमा निश्चित कर मेरे विचार से साठ वर्ष की आयु के उपरांत अधिकांश लोगों का मानसिक तथा शारीरिक बल क्षीण हो जाता है यद्यपि अपवाद हमेशा ही होते हैं। किन्तु मैं इस विवाद में नहीं पड़ना चाहता और केवल यह चाहता हूं कि इस प्रकार के ब्यौरे के प्रश्न भविष्य की संसद के लिये छोड़ दिये जायें।

(संशोधन संख्या 1837 और 1838 उपस्थित नहीं किये गये।)

***मि. महबूबअली बेग साहब** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के पहले परन्तुक में 'the Chief Justice of India shall always be consulted' शब्दों के स्थान में 'it shall be made with the concurrence of the Chief Justice of India' शब्द रखे जायें।"

प्रस्तावित संविधान के अधीन राष्ट्रपति कार्यपालिका का वैधानिक प्रमुख होगा। संविधान में संसदात्मक जनतंत्र का सिद्धांत सन्निहित है। इसलिये राष्ट्रपति का पथप्रदर्शन प्रधानमंत्री अथवा मंत्रि-परिषद् करेगा जिसमें किसी न किसी राजनैतिक दल के लोग होंगे। इसलिये राष्ट्रपति के निर्णय पर राजनैतिक दलों के दृष्टिकोण का अवश्य ही प्रभाव पड़ेगा। इसलिये

यह आवश्यक है कि उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश की नियुक्ति के पूर्व मुख्य न्यायाधिपति की सहमति प्राप्त की जाये ताकि न्यायाधीशों की नियुक्ति पर राजनैतिक दलों का प्रभाव न पड़े।

यह एक समुचित सिद्धांत है। यह आवश्यक है कि संघीय न्यायपालिका के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में मुख्य न्यायाधिपति की सहमति प्राप्त की जाये। यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रपति और मुख्य न्यायाधिपति के बीच मतैक्य नहीं हो सकता है और एक प्रकार की जिद पैदा हो सकती है। श्रीमान्, मेरा यह निवेदन है कि राष्ट्रपति और मुख्य न्यायाधिपति जैसे ऊंचे व्यक्तियों के बीच इस प्रकार के मत-वैषम्य की संभावना नहीं हो सकती। यदि किसी प्रकार का मतभेद हो भी तो राष्ट्रपति किसी ऐसे दूसरे नाम का प्रस्ताव कर सकता है जो मुख्य न्यायाधिपति को मान्य हो। इसलिये संघीय न्यायपालिका के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में मुख्य न्यायाधिपति की पूर्व सहमति प्राप्त करने के बारे में कोई गंभीर आपत्ति नहीं की जा सकती है। इससे यह तो हो ही जायेगा कि इन नियुक्तियों के संबंध में राजनैतिक दलों का प्रभाव न पड़ सकेगा।

(संशोधन संख्या 1840 और 1841 उपस्थित नहीं किये गये।)

***डा. पी.के. सेन** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के दूसरे परन्तुक के बाद निम्नलिखित नया परन्तुक प्रविष्ट किया जाये:
>
> 'Provided further that where a Judge resigns his office on grounds of ill-health, he shall be entitled to pension as if he has continued in service until the age of sixty-five years.' "

श्रीमान्, इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि यदि किसी न्यायाधीश का स्वास्थ्य गिर जाने पर उसे निवृत्त होना पड़े तो वह किसी प्रकार के भय से पीड़ित न रहे और उसके लिये कार्यपालिका में अथवा राजनैतिक क्षेत्र में किसी पद का प्रलोभन न रहे। यह एक सर्वमान्य सिद्धांत है कि उच्चतम न्यायालय के अथवा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को किसी भय अथवा प्रलोभन का शिकार न होना चाहिये। ऐसे व्यक्ति भी हो सकते हैं जिन्होंने स्वास्थ्य अच्छा रहने पर सेवा की हो किन्तु सत्तावन अथवा इकसठ अथवा बासठ वर्ष की आयु प्राप्त करने पर जो यह अनुभव करते हों कि स्वास्थ्य गिरने पर उन्हें निवृत्त होना पड़ेगा। स्वभावत: उनके लिये यह प्रलोभन रहेगा कि वे उस काल के लिये प्रबंध करें जबकि वे पदच्युत हो जायेंगे। हमें इस देश में ऐसे दृष्टांत देखने को मिले ही हैं कि एक व्यक्ति उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रहा है फिर भारत के गवर्नर-जनरल की कार्यपालिका परिषद् का सदस्य हो गया है, फिर प्रांत की कार्यपालिका परिषद् का सदस्य हो गया है और फिर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश मंडल का सदस्य हो गया है। यह न होने देना चाहिये। वास्तव में यदि कोई व्यक्ति यह अनुभव करे कि उसके लिये कोई प्रबंध नहीं रह गया है तो उसे किसी वृत्ति पद अथवा उपजीविका के लिये एक प्रकार

[डा. पी.के. सेन]

से भीख ही मांगनी होगी ताकि वह अपना भरण पोषण कर सके। उद्देश्य यही है। मैं इस प्रसंग में सभा का ध्यान अनुच्छेद 103 के खंड (7) की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं क्योंकि उसका भी इससे संबंध है। उसमें कहा गया है:

> ''कोई व्यक्ति जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश पद पर रहा हो वह भारत के राज्यक्षेत्र में किसी न्यायालय में अथवा किसी प्राधिकारी के सम्मुख वकालत अथवा कोई कार्य न करेगा।''

यद्यपि इसका इस प्रश्न से प्रत्यक्ष संबंध नहीं है किन्तु मैं यह बताना चाहता हूं कि मैंने एक नया अनुच्छेद 103-क प्रविष्ट करने के बारे में एक संशोधन उपस्थित किया है जिसमें मैंने यह कहा है कि जो व्यक्ति उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रहा हो वह भारत के मुख्य न्यायाधिपति अथवा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति के पदों के अतिरिक्त भारत सरकार अथवा किसी राज्य के अधीन किसी लाभप्रद पद पर नियुक्त होने का पात्र न होगा परन्तु राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श लेकर उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को अस्थायी रूप से अन्य प्रकार के कर्त्तव्य पालन के लिये भी नियोजित कर सकता है और साथ ही यदि आपात-संबंधी घोषणा प्रवर्तन में होने के काल में यदि कोई नियुक्ति की जाये और यदि राष्ट्रपति यह प्रमाणित करे कि वह नियुक्ति राष्ट्रीय हित के लिये आवश्यक है तो यह अनुच्छेद उस नियुक्ति के संबंध में प्रयोग में नहीं आयेगा।

इन अपवादों को छोड़कर मैं यह चाहता हूं कोई निवृत्ति न्यायाधीश सरकार के अधीन किसी लाभप्रद पद पर अथवा किसी कार्य में न लगाया जाये। यह बहुत ही आवश्यक है क्योंकि अन्यथा यह होता रहेगा कि पदासीन न्यायाधीश राजनैतिक दलों अथवा व्यापारिक संस्थाओं के साथ संपर्क स्थापित करेंगे और यह बहुत ही अनुचित होगा। यदि इन सभी रक्षा-कवचों को अपनाया जाये तो यह बहुत ही आवश्यक हो जायेगा कि उसे वही निवृत्ति वेतन दिया जाये जो संविधान में उपबन्धित सर्वोच्च आयु-सीमा अर्थात् पैंसठ वर्ष तक सेवा करने के उपरांत किसी न्यायाधीश को मिलती है।

यह कहा जा सकता है कि यह सब कुछ नियमों में निर्धारित किया जायेगा। मुझे इस संबंध में सन्देह है कि इस संबंध में संविधान में कोई उपबंध है या नहीं। जब संविधान में यह स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि न्यायाधीश को पैंसठ वर्ष की आयु तक सेवा करनी होगी तो यदि अस्वस्थ होने के कारण अथवा अन्य कारणों से वह सेवा न कर सके तो वह सेवा के अनुपात से निवृत्ति वेतन पायेगा अथवा संभवत: बहुत कम निवृत्ति-वेतन पायेगा। इसका पद से हटने पर और निवृत्ति होने पर ही उसके मस्तिष्क में प्रभाव नहीं पड़ेगा बल्कि पदासीन रहने पर भी उसके दृष्टिकोण पर प्रभाव पड़ेगा और वह किसी ऐसे साधन के खोज में रहेगा जिससे उसे दरिद्रता से छुटकारा मिल सके। मेरे विचार से न्यायाधीशों को पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त होनी चाहिये ताकि पैंसठ वर्ष के पहले भी निवृत्त होने पर वह सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकें।

श्रीमान्, मुझे आशा है कि असंख्य संशोधन के बीच यह छोटा सा संशोधन कई संशोधनों के समान अनावश्यक तथा अस्वीकार्य न समझा जायेगा। मेरे विचार से यह देश के हित साधन के लिये बहुत आवश्यक है।

***प्रो. के.टी. शाहः** श्रीमान्, मैं संशोधन संख्या 1843 उपस्थित करना चाहता हूं जो इस प्रकार हैः

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ दिया जायेः

'(2A) Any person who has once been appointed as Judge of any High Court or Supreme Court shall be debarred from any executive office under the Government of India or under that of any unit, or, unless he has resigned in writing from his office as judge, from being elected to a seat in either House of Parliament, or in any State Legislature.' ''

यह संशोधन उस सामान्य सिद्धांत के अनुरूप ही है जिसे मैंने इस सभा के सम्मुख रखने का प्रयास किया है। वह यह है कि न्यायपालिका को किसी प्रलोभन में न पड़ने दिया जाये और उसका कार्यपालिका अथवा विधानमंडल से किसी प्रकार का संपर्क न रहे। मेरा यह सुझाव है कि न्यायाधीश पद पर न रहने के काल में अथवा निवृत्त होने पर कार्यपालिका के किसी पद पर नियुक्त होने के लिये संविधान में प्रतिषेध होना चाहिये ताकि किसी न्यायाधीश के लिये अधिक उपलब्धियां अथवा अधिक सम्मान प्राप्त करने के लिये कोई ऐसा प्रलोभन न रह जाये जिससे उसकी स्वाधीनता पर प्रभाव पड़े।

मेरा यह भी सुझाव है कि न्यायाधीश को पदत्याग करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये और तब उसे साधारण नागरिक के सभी अधिकार प्राप्त होंगे जिसमें विधानमंडल में किसी जगह के लिये खड़े होने का अधिकार भी सम्मिलित है। किन्तु पदासीन रहने पर उसे यह अधिकार प्राप्त न होगा। मेरे विचार से यह सुझाव इतने स्पष्ट हैं कि इनके समर्थन के लिये अधिक कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। मैं फिर यह कहना चाहता हूं कि पहले हमें ऐसे उच्च पदस्थ सरकारी सेवकों का बड़ा कटु अनुभव रहा है जिन्होंने बहुत ऊंचे पद प्राप्त किये और फिर निवृत्त होने पर ब्रिटेन के प्रभावपूर्ण पदों को प्राप्त करते रहे अथवा इस देश में व्यापारिक संस्थाओं में निदेशकों के पदों को प्राप्त करते रहे। यहां उच्च सरकारी पदों पर रहने के कारण वे अनुचित रूप से प्रभाव डालते रहे। कांग्रेस तथा अन्य दल उनके इस प्रकार के कार्य का विरोध करते रहे हैं। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि इस प्रकार की व्यवस्था अब न रहनी चाहिये। मेरे विचार से यह संशोधन भी उस सिद्धांत के अनुरूप ही है और इसलिये सभा को इसे स्वीकार कर लेना चाहिये।

***श्री जसपतराय कपूरः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

''संशोधन की सूची के संशोधन संख्या 1843 में अनुच्छेद 103 के प्रस्तावित नवीन खंड (2ए) के स्थान में निम्नलिखित रखा जायेः

'(2A) No Judge of the Supreme Court shall be eligible for further office of profit either under the Government of India or under the Government of any State after he has ceased to hold his office.' ''

श्रीमान्, मैं प्रोफेसर शाह के संशोधन संख्या 1843 के आशय तथा उसमें सन्निहित सिद्धांत से सहमत हूं। किन्तु मैं अपना संशोधन इस कारण उपस्थित कर रहा हूं कि प्रोफेसर शाह के संशोधन में दो दोष हैं। पहले तो उनके संशोधन में यह शब्द है कि, ''कोई व्यक्ति जो उच्च न्यायालय का अथवा उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश रह चुका हो, कार्यपालिका के किसी पद पर नियुक्त न किया जा सकेगा''। इसका अर्थ यह है कि वै अवैतनिक रूप से भी भारत सरकार की अथवा किसी राज्य की सरकार की सेवा न कर सकेंगे। मेरे विचार से केन्द्र की सरकार को अथवा किसी राज्य की सरकार की सेवा न कर सकेंगे मेरे विचार से केन्द्र की सरकार को अथवा किसी राज्य की सरकार को इसकी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि वह अवैतनिक रूप से उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की सेवा प्राप्त कर सके।

प्रोफेसर शाह के संशोधन का दूसरा दोष यह है कि उसमें यह उपबंधानित किया गया है कि निवृत्त होने पर उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश संसद के किसी सदन का सदस्य होने की पात्रता रखेगा जो कि अनावश्यक है। श्रीमान्, मेरे विचार से यह सभी सरकारी सेवकों के संबंध में कहा जा सकता है कि जब तक वह किसी लाभप्रद पद पर आसीन रहेगा वह किसी भी विधान-मंडल का सदस्य न हो सकेगा चाहे वह प्रांतीय हो अथवा केन्द्रीय। इसलिये प्रोफेसर शाह के संशोधन का यह भाग अनावश्यक है। इसीलिये मैं अपना संशोधन उपस्थित कर रहा हूं।

श्रीमान्, प्रोफेसर साहब ने यह ठीक ही कहा है कि न्यायपालिका की स्वाधीनता को बनाये रखने के लिये उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश के लिये यह प्रलोभन न रहना चाहिये कि निवृत्त होने पर सम्भवत: उसे कोई लाभप्रद पद दिया जायेगा। यह पहला कारण है। दूसरा यह है कि जैसा कि मैं कुछ मिनट पूर्व एक संशोधन उपस्थित करते हुए कह चुका हूं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को निवृत्त होने के पश्चात् अवैतनिक रूप से समाज की सेवा करने के लिये तैयार रहना चाहिये। तीसरा कारण यह है कि महालेखा-परीक्षक के संबंध में यह सिद्धांत स्वीकार किया जाने वाला है। अनुच्छेद 124 (3) में, जिस पर हम कुछ समय बाद विचार करेंगे, यह उपबंधानित है कि निवृत्त होने पर महालेखा-परीक्षक को कोई पद नहीं दिया जायेगा। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में भी इसी सिद्धांत को अपनाना चाहिये। मैंने इस सभा के एक विद्वान् सदस्य से इस संबंध में विचार-विमर्श किया और उन्होंने मुझसे यह कहा कि राज्यों को इसकी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि वे उच्चतम न्यायालय के निवृत्त न्यायाधीशों की सेवाओं का विभिन्न प्रकार से उपयोग करें। इस संबंध में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु उच्चतम न्यायालय के निवृत्त न्यायाधीशों को किसी प्रकार की उपलब्धियां प्रदान न की जानी चाहिये। उच्चतम न्यायालय के निवृत्त न्यायाधीश से विभिन्न प्रकार से महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्यों का पालन करने के लिये कहा जा सकता है। किन्तु उसे अपने निवृत्ति वेतन से ही संतोष करना चाहिये जो उसे अवश्य ही दिया जायेगा; और कोई उपलब्धियां उसे नहीं प्रदान की जानी चाहियें।

इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन उपस्थित करता हूं और मुझे आशा है कि उसे यह सभा स्वीकार कर लेगी।

(संशोधन संख्या 1844 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (3) में निम्नलिखित नवीन खंड जोड़ दिया जाये:

'(c) or is a distinguished jurist.' ''

मेरे इस छोटे से संशोधन का उद्देश्य यह है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करते समय राष्ट्रपति को लोगों को चुनने के लिये एक विस्तृत क्षेत्र उपलब्ध हो जाये। सभा के ध्यान में यह आ जायेगा कि इस समय यह अनुच्छेद जिस रूप में है इसके अनुसार केवल दो श्रेणियों से न्यायाधीश चुने जा सकते हैं। एक श्रेणी तो उन लोगों की है जो किसी उच्च न्यायालय के अथवा लगातार दो या तीन उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश रह चुके हों। दूसरी श्रेणी उन लोगों की है जो किसी उच्च न्यायलय में अथवा लगातार दो या दो से अधिक उच्च न्यायालयों में अधिवक्ता रह चुके हों। मुझे इसका विश्वास है कि यह सभा इसका अनुभव करेगी कि न पदों पर ऐसे पुरूषों को और महिलाओं को भी नियुक्त करना इष्ट ही नहीं है बल्कि आवश्यक भी है जो प्रख्यात विधिवेत्ता तथा न्यायवेत्ता हों। मेरे विचार से केवल न्यायाधीश अथवा अधिवक्ता ही ऐसे लोग नहीं होते। आनुषंगिक रूप से मैं यह भी बताना चाहता हूं कि मेरा यह संशोधन हेग के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीशों के योग्यता-संबंधी उपबंध पर आधृत है। मेरे विचार से यह सभा मेरे संशोधन को स्वीकार कर लेगी और इस प्रकार उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करने में राष्ट्रपति को एक बृहत् क्षेत्र से चुनने का अवसर प्रदान करेगी।

(संशोधन संख्या 1846 और 1847 उपस्थित नहीं किये गये।)

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (3) के उपखंड (बी) के बाद निम्नलिखित नवीन उपखंड प्रविष्ट किया जाये:
>
> '(c) has been a pleader in one or more District Courts for at least twelve years.' ''

श्रीमान्, अनुच्छेद 103 के खंड (3) में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की अर्हता निर्धारित की गई है। उस खंड में कहा गया है:

> ''कोई व्यक्ति उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के लिये तब तक अर्ह न होगा जब तक कि वह भारत का नागरिक न हो और—
>
> (क) उच्च न्यायालय का अथवा लगातार दो या दो से अधिक ऐसे न्यायालयों का पांच वर्ष तक न्यायाधीश न रह चुका हो; अथवा
>
> (ख) उच्च न्यायालय का अथवा लगातार दो या दो से अधिक ऐसे न्यायालयों का दस वर्ष तक अधिवक्ता न रह चुका हो।''

जहां तक न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिये अर्हता का संबंध है मैं यह चाहता हूं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त होने के लिये वकील भी अर्ह हो। इसका कारण यह है कि अधिवक्ता की अथवा वकील की अर्हता एक ही होती है। अधिवक्ता

[श्री मोहम्मद ताहिर]

वकील से अधिक अर्ह नहीं होता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि साधारणतया अधिवक्ता केवल उच्च न्यायालय में ही कार्य करता है और वकील केवल जिला न्यायालयों में कार्य करता है किन्तु यह वे केवल अपनी सुविधा के अनुसार करते हैं। आजकल कोई वकील भी सन्था में निश्चित धन जमा करके अधिवक्ता हो सकता है। यह धन जमा करने पर ही वह अधिवक्ता हो जाता है। श्रीमान्, क्या मैं यह जान सकता हूं कि क्या कोई व्यक्ति थोड़ा धन जमा करने से ही पहले से अधिक अर्ह हो जाता है? इसलिये मेरा यह कहना है कि जहां तक अर्हता का संबंध है अधिवक्ता और वकील दोनों समान अर्हता रखते हैं। इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, यदि वकीलों के लिये उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश होने के लिये कोई अवसर न रहेगा तो उनके वर्ग के प्रति एक बड़ा अन्याय होगा। श्रीमान्, यह सभी को विदित है कि उस वर्ग ने देश की स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये बहुत बलिदान किया है। मैं यह नहीं कहता कि केवल वकीलों के ही वर्ग ने देश की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष किया। अन्य वर्गों ने भी उसके लिये संघर्ष किया किन्तु जहां तक वकीलों के वर्ग का संबंध है आप देखेंगे कि किसी बिरले अधिवक्ता ने ही देश की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष किया। अपने संविधान द्वारा यदि हम उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के नियुक्त होने का अवसर वकीलों को न दें तो यह उनके वर्ग के प्रति एक बड़ा अन्याय होगा। मेरे कुछ मित्र कह सकते हैं कि जिला न्यायालयों के कुछ ऐसे वकीलों को भी उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त होने का अवसर मिल जायेगा जिन्होंने कभी भी वकालत न की हो। कई अधिवक्ता भी ऐसे हैं जिन्होंने कभी पैरवी ही नहीं की है। इसके अतिरिक्त जब कोई व्यक्ति उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया जायेगा तो यह देखा ही जायेगा कि वह उस पद के लिये अर्ह है या नहीं। मेरा यह कहना है कि जहां तक अर्हता का संबंध है वकीलों और अधिवक्ताओं में कोई अन्तर नहीं है। इसलिये यदि एक अधिवक्ता उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश हो सकता है तो कोई कारण नहीं है कि एक वकील नियुक्त न हो सके। इन शब्दों के साथ मैं इस संशोधन को उपस्थित करता हूं।

(संशोधन संख्या 1849 उपस्थित नहीं किया गया)

***श्री मोहम्मद ताहिर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (3) की व्याख्या 1 के बाद निम्नलिखित नवीन व्याख्या प्रविष्ट की जाये और नवीन व्याख्या की गणना तदनुसार की जाये:
>
> *Explanation II.*–in this clause District Court means a District Court which exercises or which before the commencement of this Constitution exercised jurisdiction in any district of the territory of India.' ''

इस संशोधन का समर्थन करने के लिये मैं कोई भाषण नहीं देना चाहता क्योंकि जिस संशोधन को मैंने अभी उपस्थित किया था उसका यह अनुवर्त्ती संशोधन ही है। इसलिये इसकी अधिक व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।

श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (3) की व्याख्या (2) में जहां कहीं 'advocate' शब्द आया है उसके बाद 'or a pleader' शब्द रखे जायें और 'a person held judicial' शब्दों के स्थान में 'such person held judicial' शब्द रखे जाये।''

इस संशोधन के पहले भाग के संबंध में मैं कुछ अधिक कहने नहीं जा रहा हूं। जहां तक इस संशोधन के दूसरे भाग का सम्बन्ध है यदि हम व्याख्या की ओर ध्यान दें तो हम देखेंगे कि वह इस प्रकार है:

> ''In computing for the purpose of this clause the period during which a person has been an advocate, any period during which a person held judicial office after he became an advocate shall be included.''

इसमें 'a person held' इत्यादि शब्दों के स्थान में 'such person held' इत्यादि शब्द होने चाहियें। 'a' शब्द के स्थान में 'such' शब्द होना चाहिये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''खंड (3) में व्याख्या (2) के बाद 'judicial office' शब्दों के बाद 'not inferior to that of a district judge' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करना चाहता हूं कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (4) में 'supported by not less than two-thirds of the members present and voting has been presented to the President by both Houses of Parliament' शब्दों के स्थान में 'by each House of Parliament supported by a majority of the total membership of that House and by a majority of not less than two-thirds of the members of that House present and voting has been presented to the President' शब्द रखे जायें।''

***अध्यक्ष:** डा. बक्शी टेकचन्द ने इस संशोधन पर एक संशोधन उपस्थित करने की सूचना दी है। संशोधनों पर संशोधनों की सूची में इस संशोधन की संख्या 101 है।

***डा. बक्शी टेकचन्द** (पूर्वी पंजाब : जनरल): श्रीमान्, मैं उसे उपस्थित नहीं करना चाहता।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से एक और संशाधन भी है।

क्या श्री बी. दास अपना संशोधन संख्या 102 उपस्थित कर रहे हैं? उन्होंने इस संशोधन पर एक संशोधन उपस्थित करने की सूचना दी है। वह छपी हुई सूची का संशोधन संख्या 102 है।

(संशोधन उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामतः** अपने संशोधन संख्या 1854 के संबंध में मुझे यह कहना है कि चूंकि वह बहुत कुछ मसौदे के संशोधन से संबंध रखता है इसलिये मसौदा-समिति ही उस पर विचार करे। इसलिये मैं उसे उपस्थित नहीं कर रहा हूं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (4) में 'passed' शब्द के बाद 'after a Committee consisting of all the Judges of the Supreme Court had investigated the charge and reported on it to the President and' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं अनुच्छेद 103 का खंड (4) पढ़ूंगा।

> ''A judge of the Supreme Court shall not be removed from his office except by an order of the President passed after an address supported by not less than two-thirds of the members present and voting has been presented to the President by both Houses of Parliament in the same Session for such removal on the ground of proved misbehaviour or incapacity.''

श्रीमान्, अनुच्छेद 103 के खंड (4) में किसी न्यायाधीश को पदच्युत करने की प्रक्रिया का उल्लेख है। उसमें यह कहा गया है कि संसद के दोनों सदनों के राष्ट्रपति के सम्मुख प्रस्ताव उपस्थित करने पर राष्ट्रपति किसी न्यायाधीश को पदच्युत कर सकता है। श्रीमान्, मेरे विचार से यह सिद्धांतत: गलत होगा कि कोई न्यायाधीश संसद की सिफारिश से पदच्युत किया जाये। यदि संसद में बहुसंख्यक दल किसी न्यायाधीश के पक्ष में न हो तो उसे हटाना बहुत आसान होगा। न्यायाधीश को तो सभी प्रकार की दल बन्दियों से अलग रहना ही होगा। उसे निष्पक्ष होना होगा और शासनारूढ़ सरकार से किसी प्रकार की आशा न करनी होगी और अपना काम करते रहना होगा। उसे इसकी चिंता न करनी होगी कि कौन शासनारूढ़ है। मेरा यह निवेदन है कि यदि किसी न्यायाधीश के विरुद्ध कोई अभिकथन हो तो उस अभिकथन की पहले जांच की जानी चाहिये। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि उच्चतम न्यायालय के सभी न्यायाधीशों की एक समिति बने और वह समिति किसी न्यायाधीश के विरुद्ध जो अभिकथन उपस्थित किया गया हो उसकी जांच करे और उस संबंध में एक प्रतिवेदन राष्ट्रपति को दे और अभिकथन के प्रमाणित होने पर राष्ट्रपति संसद के परामर्श से उसे पदच्युत करे। इसलिये, श्रीमान्, यदि मेरा संशोधित प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया तो खंड इस प्रकार हो जायेगा:

> ''A Judge of the Supreme Court shall not be removed from his office except by an order of the President passed, after a Committee consisting of all the Judges of the Supreme Court had investigated the charge and reported on it to the President and etc.''

श्रीमान्, मेरे विचार से न्यायाधीशों को पदच्युत करने की यही यथेष्ट प्रणाली है।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1856 मि. मोहम्मद ताहिर के नाम से है। मेरे विचार से इस संबंध में किसी भाषण की आवश्यकता नहीं है। उसके द्वारा केवल 'not less than two-thirds' शब्दों के स्थान में 'a majority' शब्दों को रखने का प्रस्ताव किया गया है। मैं यह मान लेता हूं कि उसे उपस्थित कर दिया गया है।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** अच्छी बात है, श्रीमान्। मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1857 एक शाब्दिक संशोधन है।

संशोधन संख्या 1858 प्रो. के.टी. शाह के नाम से है। क्या उसका आशय 'incapacity and misbehaviour' शब्दों से पूरा नहीं हो जाता है?

***प्रो. के.टी. शाह:** यदि आपका यह विचार है कि उसका आशय पूरा हो गया है तो वह मुझे मान्य है और मैं अपने संशोधन को उपस्थित नहीं करना चाहता।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1859। उसका आशय भी बहुत कुछ उस संशोधन से पूरा हो जाता है जिसे मि. तजम्मुल हुसैन ने उपस्थित किया है।

संशोधन संख्या 1860 का भी आशय संशोधन संख्या 1859 से पूरा हो जाता है। संशोधन संख्या 1861 एक शाब्दिक संशोधन है। संशोधन संख्या 1862 डा. बी.आर. अम्बेडकर के नाम से है। वह भी एक रस्मी संशोधन है और उसका उद्देश्य केवल यह है कि 'a declaration' शब्दों के स्थान में 'an affirmation or oaths' शब्द रख दिये जायें। संविधान के मसौदे के अन्य भागों में जहां कहीं ये शब्द आये हैं हमने इस प्रकार का परिवर्तन किया है। मैं यह मान लेता हूं कि वह उपस्थित कर दिया गया है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं रस्मी तौर पर उसे उपस्थित करता हूं:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (6) में 'a declaration' शब्दों के स्थानों में 'an affirmation or oaths' शब्द रखे जायें।''

***श्री मोहम्मद ताहिर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 का खंड (7) निकाल दिया जाये।''

वह अनुच्छेद इस प्रकार है:

> ''No person who has held office as a judge of the Supreme Court shall plead or act in any court or before any authority within the territory of India.''

इस खंड के अनुसार मेरे विचार से प्रत्येक न्यायाधीश निवृत्त होने पर बिल्कुल बेकार हो जायेगा। कोई ऐसा व्यक्ति भी हो सकता है जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया जाये और निवृत्त होने पर उसे पर्याप्त तथा सामर्थ्य प्राप्त हो और वह संसार के

[श्री मोहम्मद ताहिर]

कई कार्य करना चाहे। श्रीमान्, ऐसा संविधान बनाना जिससे कोई व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कार्य न कर सके बहुत अनुचित होगा। संविधान में ऐसे उपबंध न होने चाहिये जिनके आधार पर किसी व्यक्ति के कार्य, सामर्थ्य होने पर भी सीमित हो जायें। इसलिये मेरे विचार से उच्चतम न्यायालय के ऐसे न्यायाधीशों को जो ठीक समय पर निवृत्त हो गये हों किन्तु अन्य क्षेत्रों में कार्य करने के लिये सक्षम हों अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने की आज्ञा मिलनी चाहिए। इन शब्दों के साथ मैं अपना प्रस्ताव उपस्थित करता हूं।

(संशोधन संख्या 1864 उपस्थित नहीं किया गया।)

***माननीय श्री. के. सन्तानम्:** मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 103 के खंड (7) में 'any authority' शब्दों के बाद 'or shall hold any office of profit without the previous permision of the President' शब्द प्रविष्ट किये जाये।''

मैं 'of profit' शब्दों को प्रविष्ट करना चाहता हूं।

श्रीमान्, बहुत से लोगों ने यह तर्क उपस्थित किया है कि उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को निवृत्त होने के पश्चात् किसी पद की इच्छा न करनी चाहिये। इस प्रकार के पूर्ण प्रतिषेध को स्थान देने से हम कठिनाई में पड़ जायेंगे। उदाहरण के लिये इस समय न्यायाधिपति श्री वर्दाचार्य आय कर अनुसंधान आयोग के सभापति हैं। इसी प्रकार हम पृच्छा-आयोग अथवा अन्य प्रकार के आयोग स्थापित कर सकते हैं जिनमें ये निवृत्त न्यायाधीश बहुत उपयुक्त सिद्ध हो सकते हैं। किन्तु मेरे संशोधन में इसका प्रयास किया गया है कि बिना राष्ट्रपति की स्पष्ट आज्ञा के वे किसी लाभप्रद पद को स्वीकार न करें। साधारणतया राष्ट्रपति इस प्रकार की आज्ञा न देंगे जब तक कि वह कोई ऐसा पद न हो जिसे स्वीकार करने से उस न्यायाधीश की स्वाधीनता पर कोई प्रभाव न पड़े। मैं विशेषतया यह चाहता हूं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश किन्हीं निजी समवायों में ऐसे पद स्वीकार न कर सकें जैसे निदेशक मंडली के सभापति का पद इत्यादि। यदि हम अपनी न्यायपालिका को सभी प्रकार के प्रलोभनों से अछूता रखना चाहते हैं तो यह बहुत आवश्यक है। इसलिये मेरा यह कहना है कि बिना किसी कठिनाई अथवा पेचीदगी को पैदा किये हुए मेरे संशोधन से इन सभी उद्देश्यों की पूर्त्ति हो जाती है। मैं इस सभा से यह सिफारिश करता हूं कि वह स्वीकार कर लिया जाये।

(संशोधन संख्या 1866 उपस्थित नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1867। संविधान में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में अनुच्छेद 146 भी है। मेरे विचार से इसके आशय की पूर्त्ति उस अनुच्छेद से हो जाती है। क्या आप इस संशोधन को इस प्रसंग में भी उपस्थित करना चाहते हैं?

***प्रो. के.टी. शाह:** श्रीमान्, मैं उसे उपस्थित नहीं कर रहा हूं।

(संशोधन संख्या 1868 और 1869 उपस्थित नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** मुझे जिन संशोधनों की सूचना दी गई थी उन सब पर विचार-विमर्श हो चुका है। जो सदस्य अब किसी संशोधन पर अथवा मूल अनुच्छेद पर बोलना चाहते हैं वे अब बोल सकते हैं। मैं सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे संक्षेप में बोलें। एक ही अनुच्छेद के संबंध में संशोधन उपस्थित करने में हमने दो घंटे लगा दिये हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): श्रीमान्, मैं संशोधन संख्या 1817 का समर्थन करता हूं। इस संशोधन के उपबंधों के अनुसार उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति संसद के दोनों सदनों के संयुक्त सत्र में समवेत संसद के कुल सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से होनी चाहिये। यदि आप कृपा करके इस अनुच्छेद के खंड (4) को देखें तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि जहां तक उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को पदच्युत करने का संबंध है, संसद के दोनों सदनों के एक ही सत्र में उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से समर्थित इस संबंध में एक प्रस्ताव राष्ट्रपति के सम्मुख रखना चाहिये। मेरा यह निवेदन है कि यह एक समुचित सिद्धांत है कि पदच्युत करने वाला प्राधिकारी नियुक्त करने वाला प्राधिकारी भी होना चाहिये। इसलिये पदच्युत करने के बारे में जो उपबंध है उससे इस आपत्ति का निराकरण हो गया है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में विधान मंडल को कोई प्रभाव न रखना चाहिये। जहां तक उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति की नियुक्ति का संबंध है इस प्रकार की आपत्ति तर्क की कसौटी में नहीं उतर सकती है। निस्सन्देह नियुक्ति राष्ट्रपति ही करें किन्तु उस नियुक्ति की पुष्टि संसद के कुल सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से होनी चाहिये। इससे उच्चतम-न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश पर लोगों का विश्वास बढ़ जायेगा और साथ ही जब यह ज्ञात हो जायेगा कि उसकी नियुक्ति का समर्थन राष्ट्रपति ने भी किया है तो उसकी प्रतिष्ठा तथा उसका प्रभाव और भी बढ़ जायेगा क्योंकि प्रधानमंत्री के परामर्श से काम करने से राष्ट्रपति विधानमंडल के बहुमत का प्रतिनिधित्व करेगा। यदि दो-तिहाई बहुमत की व्यवस्था स्वीकार की जाय तो उससे अधिक प्रतिष्ठा और प्रभाव प्राप्त होगा। इसके अतिरिक्त इस संशोधन से उस आपत्ति का भी निराकरण हो जाता है जो संशोधन संख्या 1813 द्वारा की गई है क्योंकि इसमें 'भारत का मुख्य न्यायाधिपति' शब्द रखे गये हैं। यह नाम उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधिपति के नाम से भिन्न होगा।

मैं संशोधन संख्या 1843 के सम्बन्ध में एक बात और कहना चाहता हूं। यह कहा गया है कि निवृत्ति के उपरांत उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश किसी लाभप्रद पद को स्वीकार न करे और न किसी न्यायालय में वकालत करे। यह उपबन्ध है तो सुन्दर किन्तु साथ ही संशोधन 1843 द्वारा उसके कार्य जिस प्रकार निर्बन्धित किये गये हैं, वह उचित नहीं हैं। मेरे मतानुसार उच्चतम न्यायालय का कोई निवृत्त, न्यायाधीश लोक सभा अथवा राज्य-परिषद् का सदस्य होने के लिये उत्तम पात्र है। इसलिये मेरी यह धारणा है कि यद्यपि निवृत्त होने के पश्चात् कोई न्यायाधीश किसी अधीनस्थ न्यायालय में वकालत न करने दिया जाये किन्तु उसे इसकी स्वतंत्रता रहे कि वह विधानमंडल के सदस्य के रूप में कार्य करता रहे।

***माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं विशेषतया एक विषय पर बोलना चाहता हूं जिसके संबंध में कुछ संशोधन उपस्थित किये गये हैं। वह है उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की आयु का विषय। कुछ सदस्यों ने यह संशोधन प्रस्तावित किया है कि उनकी आयु घटाकर साठ वर्ष कर दी जाये और एक में यह सुझाव रखा गया है कि उसे बढ़ाकर अड़सठ वर्ष कर दिया जाये। किसी विशेष आयु के लिये अर्थात् पैंसठ वर्ष अर्थात् छयासठ वर्ष के लिये कारण बताना बहुत कुछ कठिन ही है। इनमें बहुत अन्तर नहीं है। बहुत विचार करने के उपरांत जिन लोगों से परामर्श किया गया था उन की यह राय थी कि पैंसठ वर्ष ही उचित आयु होगी।

मेरे विचार से भारत में पहले आयु-सीमाएं, केवल सेवा-दृष्टि से निश्चित की गई। यहां ब्रिटिश सरकार ने कई प्रकार की सेवायें आरम्भ कीं जैसे कि आई.सी.एस. जिसमें पहले लगभग सभी अंग्रेज ही होते थे परन्तु बाद में कुछ भारतीय भी रखे जाने लगे। सरकार की परिभाषा सेवाओं के हितों की दृष्टि से ही की जाती थी। इसमें कोई संदेह नहीं कि इन सेवाओं में नियुक्त लोगों ने देश की सेवा की। मैं उनके विरुद्ध कुछ कहने नहीं जा रहा हूं। किन्तु सेवाओं की ओर ही अधिक ध्यान दिया जाता था और उन्हीं के हितों की दृष्टि से नियम बनाये जाते थे।

दूसरा दृष्टिकोण यह है कि आप किसी व्यक्ति से राष्ट्र की सेवा किस प्रकार करायें। प्रत्येक देश लोगों को काम सिखाने में बहुत धन व्यय करता है। किसी योग्य और काम सीखे हुए व्यक्ति को आपको न हटाना चाहिये और उसके स्थान में काम न सीखे हुए व्यक्ति को रखकर नये सिरे से काम न करवाना चाहिये। यह कहना कठिन है कि कोई व्यक्ति अपने पूरे सामर्थ्य से काम कर रहा है या नहीं। विभिन्न वृत्तियों में आयु के अनुसार विभिन्न सामर्थ्य सीमाएं होंगी। यह स्पष्ट है कि खान में काम करने वाला कोई व्यक्ति साठ वर्ष की आयु तक अथवा उसके लगभग किसी आयु तक काम नहीं कर सकता। बौद्धिक कार्य करने वाले लोग अधिक आयु तक कार्य कर सकते हैं। यही लेखकों के विषय में भी कहा जा सकता है। यह कहना स्पष्टत: अनर्गल होगा कि लेखक को किसी आयु के पश्चात् लिखना छोड़ देना चाहिये क्योंकि उसका बौद्धिक बल क्षीण हो जाता है। मुझे इसमें भी सन्देह है कि इस सभा के सदस्य विधानसभा के सदस्यों के लिये अथवा मंत्रियों के लिये अथवा इस प्रकार के अन्य लोगों के लिये कोई आयु निश्चित करने के पक्ष में होंगे। हम यह नहीं करते हैं। बात यह है कि उच्च स्तरों के लिये जब उत्कृष्ट लोगों की आवश्यकता होती है तो किसी ऐसी आयु-सीमा को निश्चित करना खतरनाक होता है जिसके कारण कार्य कुशल लोग न लिये जा सकें। मैं आपके सामने एक उदाहरण रखता हूं जो एक अन्य क्षेत्र में हमें दिखाई दिया। वह वैज्ञानिकों का एक मामला था। इस सम्बन्ध में क्या हम यह कह सकते हैं कि कोई वैज्ञानिक साठ वर्ष के बाद काम नहीं कर सकता है? वास्तव में कुछ उच्च कोटि के वैज्ञानिकों ने साठ वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् ही उत्कृष्ट कार्य किया है। आयनस्टीन को ही देखिये। मुझे यह ज्ञात नहीं है कि उनकी आयु क्या है किन्तु वह साठ वर्ष से बहुत अधिक होगी। फिर भी आयनस्टीन इस युग के सबसे बड़े वैज्ञानिक हैं। क्या किसी सरकार को उनसे यह कहने का साहस है कि चूंकि आप अब साठ वर्ष के हो गये हैं इसलिये हम आपके ज्ञान का उपयोग नहीं कर सकते और अब आप अपने प्रयोग निजी तौर पर

कीजिये? भारत में भी कुछ उच्चतम कोटि के वैज्ञानिक हैं और मुझे इस प्रश्न पर विचार करना पड़ा कि क्या उन्हें निवृत्त कर दिया जाये। मैंने यह कहा कि हमारे देश में उच्च कोटि के लोगों की कमी है और यदि प्रशासन-संबंधी कुछ नियमों के कारण, जो आविष्कारपूर्ण उच्च कोटि के बौद्धिक कार्य की उपेक्षा करते हैं, आप उन्हें हटा दें तो देश विपत्ति में पड़ जायेगा। हमारे बीच में जो थोड़े से लोग हैं उनकी सेवाओं से भी हम वंचित हो जायेंगे।

न्यायाधीशों के संबंध में, विशेषत: संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में हम साधारण प्रशासन-सेवाओं के आधार को स्वीकार नहीं कर सकते। न्यायाधीश भिन्न प्रकार का कार्य करते हैं। उसमें अपेक्षाकृत अधिक शारीरिक थकान का अनुभव नहीं होता। किसी न्यायाधीश को साधारणतया प्रशासनाधिकारी के समान किसी गर्दगुवार का सामना नहीं करना पड़ता; किन्तु साथ ही वह बहुत उत्तरदायित्व का कार्य है और जहां तक मुझे ज्ञात है अन्य सभी देशों में न्यायाधीशों की आयु-सीमा अपेक्षाकृत ऊंची है। वास्तव में उनके यहां कोई आयु-सीमा निश्चित की ही नहीं गई है। अमरीका के उच्चतम न्यायालय का सबसे महान न्यायाधीश अर्थात् होम्स, बयानवे वर्ष की आयु तक काम करता रहा और तीस या चालीस वर्ष तक लगातार बड़ी योग्यता से कार्य करता रहा। यदि आप इंग्लैंड की प्रिवी कौंसिल में जायें, यद्यपि मैं कह नहीं सकता कि अब वहां किस प्रकार के लोग हैं किन्तु कुछ वर्ष पूर्व जब मैं वहां गया था तो मैंने देखा था कि लम्बी दाढ़ी वाले बड़े बूढ़े लोग बैठे हुए थे और उन्हें देखने से जैसा पता लगता था वे सौ वर्ष तक किसी भी आयु के होंगे। यह हो सकता है कि आप बहुत अधिक आयु के लोगों को रखने लगें किन्तु बात यह है कि हमें इस प्रश्न पर केवल नवयुवकों को आजीविका प्राप्त कराने की दृष्टि से विचार नहीं करना चाहिये। यदि आपको ऊंची योग्यता रखने वाले लोगों की आवश्यकता होगी तो यह स्पष्ट है कि आप आयु की ओर ध्यान नहीं देंगे। कोई नवयुवक बहुत ही कुशल हो सकता है और कोई बूढ़ा व्यक्ति कुशल कार्यकर्त्ता नहीं हो सकता है। किन्तु बात यह है कि यदि कोई बुढ़ा व्यक्ति अनुभवी हो और मानसिक तथा अन्य दृष्टियों से स्वस्थ हो तो उसे हटाना अथवा हटने के लिये बाध्य करना और उसके स्थान पर किसी ऐसे व्यक्ति को रखना जो न अनुभव हो और न योग्य ही हो राज्य के लिये हानिकार ही न होगा बल्कि उसके लिये एक दुर्भाग्य की बात भी होगी। हमें उच्च न्यायालयों के लिये तथा उच्चतम न्यायालय के लिये बहुत से न्यायाधीशों की आवश्यकता होगी। इसमें सन्देह नहीं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या सीमित ही होगी किन्तु पदों की अधिकाधिक वृद्धि होगी और इस समय हमें बहुत कम लोग उपलब्ध हैं। सम्भवत: भविष्य में अधिकतर न्यायाधीश वकीलों में से ही लिये जायेंगे और बाद में आप इस पर विचार कर सकते हैं कि वकीलों में से उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश पदों के लिये अच्छे से अच्छे लोग लिये जाने के लिये किस प्रकार के नियम बनाये जायें। यह अत्यन्त आवश्यक है कि न्यायाधीश प्रथम श्रेणी की योग्यता रखने वाले तो हों ही परन्तु साथ ही देश में भी ऐसी योग्यता रखने वाले तथा ऊंचे चरित्र वाले समझे जायें। ये लोग ऐसे व्यक्ति होने चाहियें जो न्याय के मार्ग में बाधक होने पर कार्यपालिका का अथवा किसी भी व्यक्ति का विरोध कर सकें। इन सब बातों का ध्यान रखते हुए मेरे विचार से मसौदा-समिति ने संघ न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये पैंसठ वर्ष की आयु निश्चित करने के लिये जो सुझाव रखा है वह उचित ही है और किसी भी यथोचित आयु-सीमा से ऊंची नहीं है। आपको यह विदित ही है कि यहां हम में से बहुत से

[माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू]

लोग साठ वर्ष अथवा साठ वर्ष से अधिक भयास्पद आयु के हैं। किन्तु हम फिर भी काम कर रहे हैं और ऐसा काम कर रहे हैं जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के काम से कहीं अधिक थकान पैदा करने वाला है। हम इसलिये काम कर रहे हैं कि देश की हम पर कृपा है अथवा वह यह समझता है कि हमारा काम करना आवश्यक है। चाहे जो भी हो किन्तु यदि आप हमें पसन्द न करें तो हमें निकाल सकते हैं और दूसरे लोगों को हमारे स्थान में रख सकते हैं हमारे लिये कोई आयु-सीमा नहीं है। किन्तु उच्च न्यायालय के तथा संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों को इस प्रकार के राजनैतिक कार्यों अथवा दलबन्दी आदि से अलग रहना चाहिये और यदि वे स्वस्थ हों तो उन्हें काम करने देना चाहिये। इसमें कोई संदेह नहीं कि चाहे जैसे भी नियम आप बनायें किन्तु कुछ कठिनाइयां अवश्य उत्पन्न होंगी और कुछ ऐसे लोग भी काम करते रहेंगे जो ठीक नहीं। किन्तु संघीय न्यायालय में ऐसे लोग नियुक्त किये जायेंगे जो उच्च न्यायालय में अथवा अन्य किसी जगह काम कर चुके होंगे। इसलिये कोई व्यक्ति बहुत खराब नहीं हो सकता है क्योंकि ऐसा होने पर वह नियुक्त ही न किया जाता। उसने उच्च न्यायालय में मुख्य न्यायाधिपति के पद पर अथवा किसी अन्य पद पर काम करके अपनी योग्यता प्रमाणित की होगी। इसलिये आपको इसका विश्वास रहेगा कि वह एक कोटि की योग्यता रखता है। इस दशा में उसे काम करने देना चाहिये। केवल इस कारण किसी योग्य व्यक्ति को हटाने से कि वह साठ वर्ष का हो गया है, काम में बहुत कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। इसलिये सभा से मेरा यह निवेदन है कि संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये 65 वर्ष की आयु-सीमा का जो सुझाव रखा गया है वह स्वीकार कर लिया जाना चाहिये।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री कपूर ने अपने संशोधन में यह कहा है कि आयु को घटाकर 65 वर्ष से साठ वर्ष कर देना चाहिये और श्री सतीश चन्द्र ने यह सुझाव रखा है कि आयु का प्रश्न संसद के निर्णय के लिये छोड़ दिया जाये। श्रीमान्, अपना तर्क उपस्थित करते समय श्री कपूर को ही इसका विश्वास नहीं था कि साठ वर्ष की आयु उपयुक्त है अथवा नहीं। उन्होंने कहा था कि उन्हें साठ वर्ष से कम आयु का एक ऐसा न्यायाधीश मिला है जो मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ था। यदि साठ वर्ष से कम आयु का कोई न्यायाधीश मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ था तो मेरे मतानुसार उसे नियुक्त करने वाला प्राधिकारी भी मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ था क्योंकि आशा यह नहीं की जाती कि कोई न्यायाधीश मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ होगा अथवा पागल होगा। ऐसे व्यक्ति को अपने पद पर रहने नहीं दिया जा सकता। श्रीमान्, यह तर्क उपस्थित किया गया है जो लोग साठ वर्ष के हो जाते हैं वे साधारणतया अक्षम और अस्वस्थ होते हैं मैं अपने उन मित्रों से, जिनका ऐसा विचार है, यह कह देना चाहता हूं कि साठ वर्ष की आयु के हजारों ऐसे लोग हैं जो बहुत से ऐसे नवयुवकों से अधिक स्वस्थ, अधिक योग्य, अधिक कार्य कुशल और अधिक साधारण ज्ञान रखने वाले हैं जिन्हें इन गुणों पर गर्व है। यह एक वास्तविक बात है और इससे कोई मुंह नहीं मोड़ सकता। इसलिये जो यह कहते हैं कि साठ वर्ष के बाद लोग पागल हो जाते हैं उन्हें आजकल के नवयुवकों की कोई जानकारी नहीं है। उनका शारीरिक गठन ऐसा हो गया है कि चालीस वर्ष का आदमी साठ वर्ष का दिखाई देता है। औषधि विज्ञान के अनुसार किसी व्यक्ति

को पैंतालीस वर्ष के बाद ऐनक पहनने की आवश्यकता होती हैं किन्तु आप देखते हैं कि तीस वर्ष के नवयुवक ऐनक पहनते हैं। आजकल के नवयुवक चालीस वर्ष की आयु में बुढ़े हो जाते हैं किन्तु साठ वर्ष से अधिक आयु के हजारों लोग ऐसे हैं जिनका शारीरिक गठन आजकल के नवयुवकों से अच्छा है। न्यायपालिका को बूढ़े लोगों के ज्ञान तथा अनुभव से बहुत लाभ होगा। मुझे यह ज्ञात है कि वेतन आयोग ने निवृत्ति आयु को बढ़ाने की सिफारिश की है। मैं नहीं जानता कि सरकार ने इस संबंध में कौन सा कदम उठाया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रशासन की दृष्टि से इस कदम से नवयुवकों के उन्नति के मार्ग में बाधा पहुंचेगी किन्तु यह कहना कि साठ वर्ष के आदमी पागल हो जाता है एक अनर्गल बात है। मैं जानता हूं कि दो न्यायाधीश अंधे हो जाने पर भी न्यायालय में टाइप की सहायता से काम करते रहे और वे दो न्यायाधीश इस देश के सर्वोत्तम न्यायाधीशों में से थे आखिर न्यायाधीशों से तो योग्यता तथा निष्पक्षता अपेक्षित है और उनके संबंध में आयु का कोई महत्त्व नहीं है। यद्यपि मैं साठ वर्ष का हो गया हूं किन्तु मैं अपने को कई नवयुवकों से अच्छा नवयुवक समझता हूं। योग्यता ही महत्त्वपूर्ण है। यदि कोई व्यक्ति स्वस्थ और योग्य तथा धीर हो तो साठ वर्ष के बाद भी उसे लोक सेवा में लगाये रखना चाहिये। मैं इस पर इसलिये जोर दे रहा हूं कि कहीं हम नवयुवकों को अवसर देने की भावना ही में न बह जायें। आप लोगों को केवल इस कारण नहीं हटा सकते हैं कि वे साठ वर्ष की आयु के हो गये हैं।

जहां तक प्रोफेसर शाह के संशोधन का संबंध है, वे यह चाहते हैं कि न्यायाधीशों की नियुक्ति के प्रश्न का निर्णय राज्य-परिषद् करे। मैं इसका पूरे जोर से विरोध करता हूं। हमें निष्पक्ष तथा स्वाधीन न्यायाधीशों की आवश्यकता है और यदि आप इस प्रश्न के निर्णय का अधिकार राज्य-परिषद् को सौंप देंगे तो लोग अपनी-अपनी नियुक्ति के लिये कोशिश करेंगे और योग्यता आदि की उपेक्षा की जायेगी। निस्संदेह जनतंत्र की दृष्टि से उससे परामर्श करके लाभ होगा क्योंकि हम चाहते हैं कि विस्तृत रूप से विचार-विमर्श हो तथा परामर्श किया जाये किन्तु उसकी भी एक सीमा है। यदि आप राज्य-परिषद् को न्यायाधीशों को नियुक्त करने का अधिकार दे देंगे तो आप बहुत आगे बढ़ जायेंगे। आखिर हमारा प्रधानमंत्री एक उत्तरदायी व्यक्ति होगा ही। किन्तु प्रोफेसर शाह का कहना है कि उन्हें राजदूतों, राज्यपालों, न्यायाधीशों इत्यादि की नियुक्त करनी होगी। यह सच है। वे अपनी पसंद के लोगों को नियुक्त कर सकते हैं और पक्षपात भी कर सकते हैं परन्तु हमें भी उनके कार्यों पर मत देने का अधिकार होगा। आप इस प्रश्न का निर्णय 150 या इससे अधिक लोगों की परिषद् से नहीं करवा सकते। लोग अपनी-अपनी कोशिश करेंगे और योग्यता की उपेक्षा की जायेगी। मुझे यह कहना पड़ता है कि मुझे इसका आश्चर्य है कि इस संशोधन को प्रोफेसर शाह जैसे व्यक्ति ने उपस्थित किया।

मेरे माननीय मित्र मि. मोहम्मद ताहिर यह चाहते हैं कि जिन वकीलों ने जिला न्यायालयों में दस वर्ष तक वकालत की है उन्हें भी उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश होने का अधिकारी समझा जाये। श्रीमान्, हम जानते हैं कि कई मूर्ख वकील तथा बारिस्टर, जिन्हें कोई मुकदमें नहीं मिलते, न्यायालयों के बरामदों में घूमते रहते हैं। क्या इन लोगों में से उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त होने चाहियें? उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को उच्च न्यायालय का अनुभव तथा ज्ञान प्राप्त होना चाहिये और इस दृष्टि से मि. ताहिर का संशोधन आपत्तिजनक है।

[श्री आर.के. सिधवा]

विचाराधीन अनुच्छेद के संबंध में खंड (4) में न्यायाधीशों को पदच्युत करने के बारे में एक महत्त्वपूर्ण उपबंध है। उसमें कहा गया है कि किसी न्यायाधीश को हटाने के संबंध में संसदों के दोनों सदनों द्वारा एक प्रस्ताव स्वीकार करने पर और दो-तिहाई उपस्थित सदस्यों के उसके पक्ष में मत देने पर राष्ट्रपति उस न्यायाधीश को हटा सकता है। मुझे ज्ञात नहीं है कि संयुक्त प्रांत के एक न्यायाधीश के अतिरिक्त अन्य कोई न्यायाधीश हटाया गया है। उसे संयुक्त प्रांत के प्रधानमंत्री के परामर्श से गवर्नर जनरल ने दुराचार के लिये हटाया था। मुझे यह ज्ञात नहीं था कि गवर्नर जनरल को यह शक्ति प्राप्त थी यद्यपि मेरी दृष्टि में एक ऐसा न्यायाधीश था जो अपनी शक्ति का दुरुपयोग करता था। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि हमारे गवर्नर जनरल ने एक उत्कृष्ट दृष्टांत रखा है। अन्य न्यायाधीश इससे शिक्षा ग्रहण करेंगे और भविष्य में अपने आचरण तथा व्यवहार के संबंध में सावधान रहेंगे। आप इस संविधान में यह उपबंध रखना चाहते हैं कि यदि दोनों सदन अपनी संयुक्त बैठक में दो-तिहाई बहुमत से यह निर्णय करें कि कोई न्यायाधीश हटाया जाये तो राष्ट्रपति उसे पदच्युत कर देगा। यह एक अच्छी बात है कि विधानमंडलों को विस्तृत शक्तियां दी जायें किन्तु इससे बाहर से कई प्रकार के प्रभाव पड़ेंगे और किसी भी न्यायाधीश को हटाना असंभव हो जायेगा। संयुक्त प्रांत के इस मामले में न्यायाधीश के विरुद्ध कई बातें सिद्ध न हो सकीं और केवल वस्तु स्थिति पर ही विचार करना पड़ा। यदि हम इस प्रश्न को दोनों सदनों के निर्णय के लिये छोड़ दें तो दोषी होने पर भी किसी न्यायाधीश को हटाना कठिन हो जायेगा। विधानमंडल के लिये विस्तृत शक्तियों की मांग को ध्यान में रखते हुए भी मैं इसका समर्थन नहीं कर सकता और वास्तव में मुझे इसका आश्चर्य है कि संविधान में इस प्रकार के उपबंध को स्थान देने का प्रस्ताव किया गया है। यदि आप इसे राष्ट्रपति पर छोड़ दें और कदाचित वह भ्रष्ट व्यवहार करे तो हम उससे पूछताछ कर सकते हैं। मुझे विश्वास है कि वह भ्रष्ट व्यवहार न करेगा।

आयु-सीमा के संबंध में जो संशोधन उपस्थित किया गया है उसका मैं विरोध करता हूं और मूल प्रस्ताव के केवल इस अंग को छोड़कर कि विधान-मंडल के दोनों सदनों को किसी न्यायाधीश को हटाने की शक्ति दी जाये, मैं उसका समर्थन करता हूं।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, अनुच्छेद 103 पर विचार-विमर्श करते समय कई महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाये गये हैं। पहला प्रश्न जो मैं उठाना चाहता हूं वह हमारी न्यायपालिका में निर्वाचन प्रणाली को प्रयुक्त करने का प्रश्न है। श्रीमान्, यह प्रस्ताव रखा गया है कि भारत के मुख्य न्यायाधिपति को चुनने की एक प्रणाली यह है कि संयुक्त सत्र में उसे दो-तिहाई बहुमत से चुना जाये। प्रोफेसर के.टी. शाह ने राज्य-परिषद् द्वारा न्यायाधीशों का निर्वाचन करने की व्यवस्था का प्रस्ताव रखकर इस प्रणाली को सीमित कर दिया है। किसी भी दशा में, चाहे यह संसद के संयुक्त सत्र में किया जाये अथवा राज्य-परिषद् में किया जाये, स्थिति यह है कि हम एक बहुत ही भयास्पद सिद्धांत को अपनाने जा रहे हैं जिसके अनुसार उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों का निर्वाचन होगा न कि वे चुने जायेंगे जैसा कि अभी तक होता आया है। श्रीमान्, इस प्रश्न के इस अंग

पर, अर्थात् इस पर कि न्यायाधीशों को चुना जाये या निर्वाचित किया जाये, बहुत विचार किया गया है और हमने इनमें से एक सुझाव को अस्वीकार कर दिया है और न्यायाधीशों को चुनकर ही नियुक्त करने की प्रणाली को ही उपयुक्त समझा है।

***प्रो. के.टी. शाहः** अपनी ओर से मैं यह बात साफ कर देना चाहता हूं कि मैंने यह नहीं कहा है कि वे निर्वाचित किये जायें। मैंने यह कहा है कि राज्य-परिषद् से परामर्श किया जाये।

***श्री आर.के. सिधवाः** उसका वही अर्थ है।

***श्री विश्वनाथ दासः** विधान-मंडल से परामर्श लेना और निर्वाचित करना अवश्य ही दो भिन्न प्रणालियां हैं। किन्तु इस संविधान के अधीन हम जिस जनतंत्र को चलन में लाना चाहते हैं क्या उसमें मेरे मित्र प्रोफेसर शाह न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में निर्वाचन को स्थान देने से कम किसी बात को करना चाहते हैं? जिन देशों ने इस निर्वाचन के सिद्धांत को स्वीकार किया है उनकी कठिनाइयों से हम अनभिज्ञ नहीं हैं। यदि आप एक बार निर्वाचन के सिद्धांत को स्वीकार कर लेंगे तो आप किन कारणों से अधीनस्थ न्यायालयों में निर्वाचन प्रणाली को स्वीकार न करेंगे और किस प्रकार उन्हें इसे स्वीकार करने से रोकेंगे? अमेरिका में एक निश्चित निर्वाचक-मंडल लोक-अभियोजकों तक को निर्वाचित करता है।

इस स्थिति में, श्रीमान्, मैं अपने मित्रों से अनुरोध करता हूं कि निर्वाचन के आधार पर नियुक्त करने की प्रणाली की उपेक्षा की जानी चाहिये और उसे हमेशा के लिये अस्वीकार कर देना चाहिये।

श्रीमान्, अब मैं उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों की आयु-सीमा के प्रश्न को उठाता हूं। साधारणतया सरकारी सेवक पचपन वर्ष में निवृत्त होते हैं। उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में यह आयु बढ़ाकर साठ वर्ष कर दी गई है। मेरे विचार से मसौदा-समिति ने इस परिवर्तन के लिये यथोचित कारण नहीं बताये हैं। मैंने एक लेख देखा है जिसमें इसकी कुछ व्याख्या की गई है, परन्तु मेरा यह कहना है कि यथोचित व्याख्या नहीं की गई है। एक बात हम नहीं भूल सकते हैं और वह यह है कि उच्चतम न्यायालय के तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों ने, जो पहले वकालत करते होंगे अथवा अधीन न्यायाधिकारी होंगे और अपनी योग्यता से ऊंचे उठे होंगे, कुछ निजी सम्पति अर्जित की होगी और वह उन्हीं की सम्पति होगी। संविधान द्वारा उन्हें सेवा की अवधि के संबंध में, स्वाधीनता से निर्णय करने और अपने कृत्यों तथा कर्त्तव्यों का पालन करने में बाहर से हस्तक्षेप न होने देने के संबंध में रक्षा कवच प्रदान किया गया है। इस स्थिति में यदि मेरे माननीय मित्र आयु को बढ़ाकर पैंसठ वर्ष भी करना चाहें तो उसके लिये मेरे विचार से, कारण बताने की आवश्यकता है। श्रीमान्, एक ऐसे देश में जहां अंग्रेजों के शासन-काल में लोगों की औसत आयु अठाइस वर्ष थी और अब भी मुझे विश्वास है कि वही है, उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों को पैंसठ वर्ष तक काम करने देने के लिये कोई कारण नहीं है। हिंदू समाज के महान ऋषियों ने बताया है कि जीवनयापन किस प्रकार किया जाये। उन्होंने यह कहा है कि वृद्धावस्था

[श्री विश्वनाथ दास]

में वानप्रस्थ अथवा सन्यास धारण करना चाहिये। क्या आप कम से कम उच्च न्यायालयों और उच्चतम-न्यायालय के न्यायाधीशों को वानप्रस्थ और सन्यास धारण करने की व्यवस्था नहीं रहने देना चाहते? हिंदू समाज में यह जीवन की बहुत ही महत्त्वपूर्ण अवस्था है। अन्य समाजों में भी जैसे कि ईसाइयों के और मुसलमानों के समाज में यह आशा की जाती है कि लोग वृद्धवस्था में अपना समय ईश्वरोपासना अथवा स्वतंत्र रूप से सामाजिक कार्य करने में लगायेंगे। मनुष्य को अपने जीवन-काल में, कम से कम वृद्धावस्था में, आजीविका अर्जन से अतिरिक्त किसी अन्य कार्य में अर्थात् किसी आध्यात्मिक अथवा सामाजिक कार्य में लगाने के लिये समय मिलना चाहिये। इस स्थिति में मुझे विश्वास है कि इस सभा के माननीय सदस्य समाज की इस स्वाभाविक आशा को ठुकरायेंगे नहीं और पैंसठ वर्ष की आयु-सीमा को स्वीकार न करेंगे ताकि उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीश, जिनसे समाज, देश तथा राज्य बहुत आशा लगाये बैठा रहता है, वानप्रस्थ अथवा सन्यस्थ का जीवन व्यतीत करके अपने स्रष्टा की उपासना कर सकें अथवा जिनका ईश्वर में विश्वास न हो वे समाज सेवा में लग सकें।

अब मैं अनुच्छेद 103 के खंड (2) के परन्तुक को उठाता हूं। उसमें कहा गया है: ''परन्तु मुख्य न्यायाधिपति के अतिरिक्त अन्य किसी न्यायाधीश के संबंध में भारत के मुख्य न्यायाधिपति से हमेशा परामर्श लिया जायेगा''। मेरी समझ में नहीं आता कि किस कारण इस परन्तुक को रहने दिया जाये। मुख्य न्यायाधिपति एक बहुत ही उत्तरदायी व्यक्ति होगा और यह समझ में नहीं आता कि किस कारण उससे अपने उत्तराधिकारी मुख्य न्यायाधिपति की नियुक्ति के संबंध में परामर्श न लिया जायेगा। मेरे विचार से मुख्य-न्यायाधिपति के पद के लिये एक उपयुक्त व्यक्ति को चुनने के संबंध में मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श न लेना उनके पद और प्रतिष्ठा के प्रति एक अन्याय होगा।

मैं एक बात और कहकर समाप्त कर दूंगा। यह कहा गया है कि किसी न्यायाधीश को कार्यकाल में अथवा निवृत्ति काल में कोई लाभप्रद पद न दिया जाना चाहिये। मेरे विचार से यह संशोधन तर्कपूर्ण नहीं है। गवर्नर-जनरल और राज्यपालों को छोड़कर उच्चतम-न्यायालय के न्यायाधीशों को सबसे अधिक वेतन मिलेंगे। यदि उच्चतम-न्यायालय के किसी न्यायाधीश को सरकार कोई पद देगी तो वह उसी के पद के समान कोई पद होगा अथवा कोई ऐसा पद होगा जिसमें बहुत कुछ न्याय संबंधी कार्य ही करने होंगे। इसे ध्यान में रखते हुए जिन निर्बन्धों का प्रस्ताव किया गया है वे मुझे तर्कपूर्ण नहीं प्रतीत होते, इसलिये जिन मित्रों की इस प्रकार की धारणा है उनसे मैं सहमत नहीं हूं। इस प्रकार के परन्तुक का आधार केवल भय ही दिखाई देता है। मैं अपने मित्रों से यह अपील करता हूं कि वे इस प्रकार का भय न करें। मेरे विचार से उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करने के संबंध में जिस प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष निर्वाचन प्रणाली का प्रस्ताव उपस्थित किया गया है उस पर विचार भी न किया जाना चाहिये और साठ वर्ष की न कि पैंसठ वर्ष की आयु-सीमा निश्चित की जानी चाहिये। अनुच्छेद 103 के खंड (2) का परन्तुक अनावश्यक है और राज्य के अधीन लाभप्रद पदों पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करने के संबंध में प्रस्तावित निर्बन्धन अनावश्यक हैं और यह दिखाई देता है कि उनका आधार केवल भय ही है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यहां केवल सभा को चेतावनी देने और यह बताने आया हूं कि मेरे मित्र श्री शिब्बनलाल सक्सेना का सुझाव स्वीकार न किया जाये। उनका यह विचार प्रतीत होता है कि जो कोई भी नियुक्ति की जाये उसका समर्थन संसद के दोनों सदनों के दो-तिहाई बहुमत से हो। मेरा यह निवेदन है कि यह बहुत ही खतरनाक सिद्धांत है। संसद के दोनों सदनों के दो-तिहाई बहुमत का अर्थ यह है कि नियुक्तियां बहुसंख्यक दल के नेता की स्वेच्छा पर ही निर्भर रहेगी। यह कई बार बताया जा चुका है कि वर्तमान सरकार अर्थात् विभिन्न प्रांतों के मंत्री कभी-कभी न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करते हैं। हाल में प्रिवी कौंसिल के न्यायाधीश, न्यायाधिपति बोमांट ने इस प्रकार की कार्यवाही की कड़ी आलोचना करते हुए कुछ बातें कहीं थीं। एक निर्णय के संबंध में अपना निर्णय सुनाते समय इस न्यायाधिपति ने यह कहा था कि मुझे यह कहना पड़ता है कि कांग्रेस को जिस किसी समय न्यायपालिका तथा कार्यपालिका को पृथक करने की बहुत चिंता थी अब शक्ति प्राप्त करने पर पुरानी प्रणाली को ही बनाये रखने के पक्ष में दिखाई देती है। एक प्रख्यात न्यायाधीश का यह कथन यह प्रमाणित करता है कि कार्यपालिका के लिये किसी समय न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करने के लिये गुंजाइश है। इसका भविष्य में बहुत ही गम्भीर परिणाम हो सकता है। इसलिये मैं इस सभा को इस संबंध में सचेत करना चाहता हूं और यह सिफारिश करता हूं कि वह किसी ऐसे प्रस्ताव को स्वीकार न करे जिसका उद्देश्य यह हो कि उसे न्यायाधीशों की नियुक्ति की संपुष्टि का अधिकार प्राप्त हो और न इस सुझाव से सहमत हो कि संसद ही न्यायाधीशों को पदच्युत करने के संबंध में कार्यवाही करे। इस प्रकार की कोई बात एक क्षण के लिये भी स्वीकार न की जानी चाहिये।

अब मैं आयु के प्रश्न को उठाता हूं। मेरे विचार से हमें न्यायाधीश की कम से कम आयु निश्चित करनी है न कि अधिक से अधिक आयु। हम यह जानते हैं कि इंग्लैंड में उच्च न्यायालय के अथवा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये कोई आयु-सीमा निश्चित नहीं की गई है। किसी भी आयु का पुरुष, यदि वह न्याय संबंधी कार्यवाही का संचालन कर सकता है, न्यायाधीश वर्ग में सम्मिलित किया जा सकता है। यह एक बहुत गलत सिद्धांत है कि किसी व्यक्ति को विशेषतया किसी वृद्ध व्यक्ति को अपनी आयु घोषित करने के लिये बाध्य किया जाये। इस प्रसंग में मैं लोगों के नेताओं को तथा प्रतिष्ठित लोगों को चेतावनी देता हूं कि वे अपने जन्म-दिवस न मनायें। यदि वे अपने जन्म दिवस मनाना चाहें तो कम से कम उन्हें अपनी आयु घोषित न करनी चाहिये। यह बड़े खेद की बात है कि कोई व्यक्ति जिसे हम युवा समझें, मेरे मस्तिष्क में इस समय हमारे नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू हैं, अपना जन्म-दिवस मनाने की आज्ञा देते समय यह कहें कि वे लगभग साठ वर्ष के हो गये हैं। अब लोगों को उनकी ठीक-ठीक आयु का पता लग गया है। अभी तक लोग उन्हें दस वर्ष कम आयु का समझे बैठे थे। इसका अर्थ यह नहीं है कि वे यह चाहते थे कि लोग उन्हें कम आयु का समझें किन्तु यह एक गलत बात है कि लोगों को किसी की आयु का स्मरण कराया जाये।

इसके अतिरिक्त जहां तक आयु का संबंध है किसी महिला के उच्चतम-न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के संबंध में कोई प्रतिषेध नहीं दिखाई देता। श्रीमान्, मैं आपसे पूछता हूं कि उच्चतम न्यायालय की न्यायाधीश नियुक्त होने के लिये कौन बुद्धिमती स्त्री

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

पचपन वर्ष की होने पर भी यह कहेगी कि मैं पचपन वर्ष की हूं? उच्च न्यायालय की न्यायाधीश होने के लिये तो क्या इंग्लैंड के राज्य की सम्राज्ञी होने के लिये भी कोई स्त्री यह न कहेगी कि वह पचास वर्ष की है अथवा साठ वर्ष की है। किसी राज्य को पाने के लिये भी कोई स्त्री यह न कहेगी इसलिये आयु निर्धारित करने का सिद्धांत एक गलत सिद्धांत है। कोई स्त्री या पुरुष अधिक आयु प्राप्त करने से ही बुड्ढ़े नहीं हो जाते। इस समय अधिक से अधिक आयु निर्धारित न की जानी चाहिये। यह प्रश्न उन लोगों के निर्णय के लिये छोड़ देना चाहिये जो इस संबंध में निर्णय करने के लिये सक्षम हों।

इस संबंध में मैं श्री सतीशचन्द्र के संशोधन की ओर संकेत करता हूं। वे यह चाहते हैं कि आयु इस सभा में निर्धारित की जानी चाहिये बल्कि भविष्य में संसद में निर्धारित की जानी चाहिये। यदि हम इसके लिये सहमत हो जाते हैं तो एक कठिनाई उत्पन्न होगी। संविधान के स्वीकार होने पर हमें उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के लिये एक मुख्य न्यायाधिपति नियुक्त करना होगा। यदि कोई आयु निर्धारित न की गई और हम यह निश्चय करें कि संसद इसे निर्धारित करेगी तो हम कठिनाई में पड़ जायेंगे। हम इसका निर्णय न कर सकेंगे कि किस प्रकार के लोगों को हम नियुक्त न करें।

अब मैं एक शब्द 'परामर्श' के संबंध में कहूंगा डा. अम्बेडकर ने उस पंक्ति को निकाल देने का प्रस्ताव रखा है जिसमें कहा गया है ''उच्चतम न्यायालय और राज्यों के उच्च न्ययालयों के उन न्यायाधीशों से परामर्श लेने के पश्चात्'' और मेरे विचार से उसे स्वीकार कर लेना चाहिये। आखिर यह एक ऐसा विषय है जिसके संबंध में केवल राष्ट्रपति को ही निर्णय करना चाहिये। यदि वह यह समझता है कि कोई व्यक्ति बहुत ही योग्य है तो उसे किसी से परामर्श लेने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार का उपबंध न रखना चाहिये कि वह अवश्य ही ऐसा करे। मेरे विचार से इस अनुच्छेद का निर्वचन यह है कि यदि राष्ट्रपति आवश्यक न समझे तो वह किसी से परामर्श लेने के लिये बाध्य नहीं है। यदि यह निर्वचन है तो ठीक है। यदि यह निर्वचन नहीं है तो मेरा यह निवेदन है कि यह कहना उचित न होगा कि राष्ट्रपति को उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों से अवश्य ही परामर्श लेना चाहिये। आखिर उच्चतम न्यायालय के मुख्याधिपति उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की अपेक्षा अधिक प्रतिष्ठित होगा। यह अजीब सा लगता है कि ऊंचे पद के लिये किसी व्यक्ति को चुनने के लिये राष्ट्रपति को नीचे पदों के लोगों से परामर्श लेना पड़ेगा। संभव है आजकल जनतंत्र इस ओर प्रगति कर रहा हो। हमें ऐसे विद्यार्थी देखने को मिलते हैं जो यह कहते हैं कि अध्यापकों की नियुक्ति तथा उन्नति के संबंध में भी उनसे परामर्श लिया जाना चाहिये। कभी हमारे देखने में भी ऐसे विद्यार्थी आते हैं जो दूसरों के भड़काने पर यह मांग करते हैं कि कोई अध्यापक प्रधानाध्यापक बना दिया जाये। किन्तु यह उचित नहीं है और मेरा यह निवेदन है कि ऊंचे पदों पर लोगों को नियुक्त करने के लिये नीचे पदों पर नियुक्त लोगों से परामर्श न लिया जाना चाहिये। देश के कुछ भागों में हमें अजीब स्थिति देखने को मिलती है क्योंकि वहां किसी उप-न्यायाधीश अथवा न्यायाधीश की नियुक्ति के संबंध में लोक सेवा आयोग से परामर्श लिया जाता है। लोक सेवा आयोग में भले ही ऐसा कोई सदस्य न हो जिसने किसी न्यायालय में वकालत

की हो अथवा जिसे न्यायाधीश पद के लिये आवश्यक योग्यता का ज्ञान हो किन्तु फिर भी लोक सेवा आयोग से परामर्श लिया जाता है। यह एक अनर्गल बात है। कुछ जगहों में उप-न्यायाधीश को विभाग की विधि-संबंधी परीक्षाओं में बैठना पड़ता है और उन्हें एक ऐसा अधिकारी लेता है जिसे विधि का कोई भी ज्ञान नहीं होता। इस प्रकार की बातें न होनी देनी चाहिये। इसलिये मैं यह निवेदन करता हूं और पूरे जोर से यह निवेदन करता हूं कि ऊंचे पदों के लिये नियुक्तियां करने के लिये नीचे पदों के न्यायधिकारियों से परामर्श लेने की प्रक्रिया तर्क विरुद्ध है।

श्रीमान्, मुझे एक शब्द अपने माननीय मित्र डा. सेन के संशोधन के संबंध में कहनी है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उस पर विचार करने की आवश्यकता है। यदि कोई व्यक्ति अपनी वकालत छोड़कर उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो जाये और दूसरे वर्ष रुग्ण होने के कारण उसे पदत्याग करना पड़े और वह अपने को साधनहीन पाये तो यह बहुत खेदजनक बात होगी। भविष्य के लिये उसे किसी प्रकार की प्रतिभूति मिलनी चाहिये और वह प्रतिभूति निवृत्ति वेतन के रूप में होनी चाहिये। हमें न्यायापालिका के ऐसे सदस्य देखने को मिले हैं जिन्हें कठिन मानसिक परिश्रम से रुग्ण होकर पदत्याग करना पड़ा है। ऐसे लोगों को निवृत्ति वेतन देने के लिये कोई उपबंध होना चाहिये। श्रीमान्, मैं कह नहीं सकता कि इस प्रकार का उपबंध संविधान में समाविष्ट करना चाहिये अथवा इसे संसद के निर्णय के लिये अथवा राष्ट्रपति के निर्णय के लिये छोड़ देना चाहिये। राष्ट्रपति न्यायाधीशों की नियुक्ति की शर्तों में यह भी रख सकता है कि यदि रोगवश किसी न्यायाधीश को पदत्याग करना पड़े तो उसे निवृत्त वेतन मिलेगा।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, अब हम संविधान संबंधी विचार-विमर्श के एक ऐसे स्तर पर पहुंच गये हैं जो यदि सबसे महत्त्वपूर्ण स्तर नहीं तो कम से कम सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण स्तरों में से एक है। उच्चतम न्यायालय जनतंत्र का प्रहरी है। संविधान के एक आरम्भ के भाग में हमने मूलाधिकारों का समावेश किया है और हमें इसकी चिंता है कि संघ के नागरिकों को इन मूलाधिकारों की प्रत्याभूति प्राप्त हो, इसी आलय द्वारा इन अधिकारों की रक्षा होगी और प्रत्येक नागरिक को संविधान में सन्निहित ये अधिकार प्राप्त हो सकेंगे। इसलिये इस न्यायालय के कार्य में कार्यपालिका का किसी प्रकार का हस्तक्षेप न होना चाहिये। उच्चतम न्यायालय जनतंत्र का प्रहरी है। वह नागरिकों के अधिकारों का परिदर्शक तथा संरक्षक है। इसलिये प्रत्येक स्तर पर अर्थात् न्यायाधीशों को नियुक्त करने के स्तर से लेकर उनके वेतन तथा पदावधि निश्चित करने के स्तर तक सभी बातों को इस समय नियमित करने की आवश्यकता है ताकि कार्यपालिका का न्यायाधीशों के प्रकार्यों से बहुत कम संबंध रहे अथवा कुछ भी संबंध न रहे। इन उपबंधों को इसी को दृष्टि में रखकर स्थान दिया गया है। जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनको इस कसौटी पर कसना चाहिये कि उनसे न्यायपालिका की वह स्वाधीनता प्राप्त होती है अथवा नहीं जिसे इस अध्याय में स्थान देने का प्रयास किया गया है।

श्रीमान्, दो रस्मी संशोधन उपस्थित किये गये हैं, अर्थात् संशोधन संख्या 1813 और 1840 जिनका संबंध नामों से है। उनका उद्देश्य यह है कि भारत का मुख्य न्यायाधिपति उच्चतम मुख्य-न्यायाधिपति कहा जाये। उच्च न्यायालयों के संबंध में इसका यह अर्थ होता

[श्री अनन्तशयनम् आयंगर]

है कि हम उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को उच्च न्यायालय संबंधी मुख्य न्यायाधिपति अथवा उच्च न्यायाधिपति कहें। उच्चतम मुख्य न्यायाधिपति, उच्च मुख्य न्यायाधिपति अथवा निम्न मुख्य न्यायाधिपति—मैंने न्यायाधीशों के ऐसे नाम कभी नहीं सुने। उच्चतम न्यायालय इसी देश में स्थापित होने नहीं जा रहा है। अमेरिका में और विभिन्न अन्य स्थानों में भी उच्चतम न्यायालय हैं। ये संशोधन बिल्कुल अनावश्यक हैं और इन्हें अस्वीकार कर देना चाहिये।

जहां तक न्यायाधीशों की संख्या का संबंध है, उच्चतम न्यायालय का कई विषयों के संबंध में अपीलीय अधिकार क्षेत्र होने के कारण सात की संख्या कोई बड़ी संख्या नहीं है। स्थिति के अनुसार तथा समय की आवश्यकताओं को देखते हुए संसद को इस सात की संख्या को बढ़ाने, नियुक्ति की शक्ति दी गई है।

जो महत्त्वपूर्ण संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनका आशय यह है कि राज्यों में उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से राष्ट्रपति परामर्श ले। उच्चतम न्यायालय के अपर न्यायाधीशों को नियुक्ति के संबंध में मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श लेना आवश्यक है। मुख्य न्यायाधिपति के संबंध में उससे ऊंचा कोई ऐसा न्यायाधिकारी न होगा जिससे कि परामर्श लिया जा सके।

इसलिये इस उपबंध को तो रखना ही होगा। अवर न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श लिया जायेगा। किन्तु राज्यों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से परामर्श लेने को आपत्तिजनक बताया गया है। यदि राष्ट्रपति यह समझे की इस प्रकार का परामर्श लेना आवश्यक है तो मेरे विचार से उसे इसकी स्वतंत्रता होनी चाहिये। यह राष्ट्रपति पर छोड़ दिया गया है कि वह अपने विवेक से इसका निर्णय करे कि उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से परामर्श लिया जाये अथवा नहीं लिया जाये। उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति इस देश के किसी प्रांत का होगा और वह इस संबंध में राय देने में असमर्थ हो सकता है कि उच्चतम न्यायालय में कौन लोग न्यायाधीश नियुक्त किये जायें। इसलिये राष्ट्रपति केवल मुख्य न्यायाधिपति से ही यथोचित परामर्श नहीं प्राप्त कर सकेगा और उसे विभिन्न उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से परामर्श लेने की आवश्यकता पड़ेगी। वह सभी न्यायाधीशों से परामर्श लेने के लिये बाध्य नहीं है। जब कभी वह यह समझे कि यथोचित न्याय-प्रशासन के हित में परामर्श लेना आवश्यक है तो वह स्वेच्छा से परामर्श लेगा। उसे यह शक्ति दी जानी चाहिये।

यह एक अजीब सुझाव है कि भारत का मुख्य न्यायाधिपति व राज्य परिषद के सदस्यों के बहुमत से नियुक्त किया जाये। जिन सदस्यों ने इस आशय का संशोधन उपस्थित किया है वे मुझे 'अजीब' शब्द के प्रयोग के लिये क्षमा करेंगे क्योंकि मैं उनके सुझाव को और कुछ कह भी नहीं सकता। इससे उनकी नियुक्ति एक निर्वाचन का रूप धारण कर लेगी और बहुमत प्राप्त करने के लिये बहुत प्रयत्न किये जायेंगे। यह सभ्य संसार के किसी भाग में अनहोनी बात है।

आयु के संबंध में, कुछ नवयुवक मित्र यह चाहते हैं कि पैंसठ वर्ष की आयु को घटाकर साठ वर्ष कर दिया जाये और अन्य लोग यह चाहते हैं कि उसे बढ़ाकर अड़सठ वर्ष कर दिया जाये। कनाडा में ऊपर की आयु-सीमा पचहत्तर वर्ष की है। वहां न्यायाधीश

पचहत्तर वर्ष तक पदासीन रहते हैं। इंग्लैंड की प्रिवी कौंसिल के बारे में मुझे यह बताया गया है कि उसके न्यायाधीश सत्तर वर्ष की आयु प्राप्त करने पर निवृत्त होते हैं। अमेरिका में कोई आयु-सीमा है ही नहीं। उच्च न्यायालय का न्यायाधीश वर्तमान विधि के अधीन साधारणतया साठ वर्ष की आयु में निवृत्त होता है और यदि कुछ ही वर्ष पूर्व नियुक्त किया गया हो तो उसकी आयु के विरुद्ध कुछ नहीं कहा जाता है। भले ही हमारे मित्र श्री मुंशी इसे न मानें किन्तु वे अभी काफी हृष्ट-पुष्ट हैं और पच्चीस या तीस वर्ष तक वे प्रत्येक व्यक्ति के संबंध में ठीक-ठीक निर्णय कर सकते हैं। इस प्रकार के लोगों की सेवा हमें प्राप्त होनी ही चाहिये। इस दृष्टि से साठ वर्ष की आयु बहुत कम है और अपने यहां की गरम आबोहवा को देखते हुए मेरी तो यह इच्छा है कि सत्तर वर्ष की आयु रखी जाये। किन्तु कुछ सावधानी की आवश्यकता है। इसलिये, पैंसठ वर्ष की आयु-सीमा यथोचित आयु-सीमा प्रतीत होती है। इसलिये पैंसठ वर्ष की आयु न बढ़ाई जाये और न घटाकर साठ कर दी जाये। नवयुवक हृष्ट-पुष्ट होते हैं और उनके लिये कई अन्य क्षेत्र खुले पड़े हैं। न्यायपालिका के लिये संतुलित बुद्धि की आवश्यकता है। अपरिपक्व मस्तिष्क के लोग बेकार ही सिद्ध होंगे। न्यायाधीशों को पर्याप्त अनुभव तथा निरुद्विग्न होकर निर्णय करने की क्षमता प्राप्त होनी चाहिये। वृद्ध न्यायाधीश नवयुवकों के मार्ग में बाधक सिद्ध न होंगे। नवयुवक कई अन्य कार्य कर सकते हैं। न्यायपूर्ण निर्णय के मार्ग में नवयुवकों को बाधा न पहुंचानी चाहिये और इसलिये केवल वयोवृद्ध पुरुष ही चुने जाने चाहियें। किन्तु किसी असाधारण योग्यता तथा संतुलित बुद्धि वाले किसी नवयुवक के लिये जिसे प्रत्येक व्यक्ति के संबंध में निर्णय करने की विपुल क्षमता प्राप्त हो, कोई बाधा नहीं है। मद्रास के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति की आयु तैतालीस वर्ष ही है और वे पैंसठ वर्ष तक कार्य कर सकते हैं। यह एक असाधारण बात है अन्यथा किसी युवा न्यायाधीश से प्रत्येक व्यक्ति के संबंध में ठीक-ठीक निर्णय करने की आशा नहीं कर सकते।

श्रीमान्, मैं अपने माननीय मित्र श्री कामत के इस कथन से सहमत हूं कि दस वर्ष से सेवा में लगे हुए न्यायाधीशों से ही उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश न चुने जाने चाहियें। उन्होंने यह प्रस्ताव उपस्थित किया है कि राष्ट्रपति को इसकी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि यथोचित न्याय प्रशासन की दृष्टि से वह किसी प्रख्यात न्यायवेत्ता को भी नियुक्त कर सके। उनके संशोधन द्वारा राष्ट्रपति इसके लिये बाध्य नहीं होता कि वह केवल न्यायवेत्ताओं को ही नियुक्त करे। कई मामलों के संबंध में उच्चतम न्यायालय को संवैधानिक प्रश्नों पर विचार करना होता है। किसी वकील को इन संवैधानिक मामलों का बहुत कम अनुभव होता है। कोई भी व्यक्ति विधि-वृत्ति को सीधे-सीधे स्वीकार कर सकता है। वह किसी विधि कालेज में प्रवेश कर सकता है अथवा किसी विश्वविद्यालय में विधि की फैकल्टी का डीन हो सकता है। कई प्रख्याति व्यक्ति तथा लेखक हैं और कई ख्यातनामा न्यायवेत्ता हैं। यदि राष्ट्रपति आवश्यक समझे तो उसे किसी प्रख्यात न्यायवेत्ता को नियुक्त करने की स्वतंत्रता क्यों न हों? वास्तव में मेरा तो यह परामर्श है कि सात न्यायाधीशों में से एक ख्यातनामा न्यायवेत्ता होना चाहिये। श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी ने, जिनसे मैंने परामर्श किया था, मुझसे कहा कि कुछ वर्ष पूर्व संयुक्त राज्य अमरीका में प्रेसीडेंट रूजवेल्ट ने फिलिप फ्रैंकफर्टर नाम के एक व्यक्ति को नियुक्त किया था। वह हारवर्ड विश्वविद्यालय का एक प्रोफेसर था। यह उन्होंने एक नया प्रयोग किया। उसके पहले केवल बारिस्टर अथवा न्यायपालिका के लोग लिये जाते थे। उनका यह प्रयोग बहुत सफल सिद्ध हुआ

[श्री अनन्तशयनम् आयंगर]

है। वह व्यक्ति इस समय संयुक्त राज्य अमरीका के सबसे अग्रगण्य तथा प्रख्यात न्यायाधीशों में गिना जाता है। इसलिये, श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव से सहमत हूं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को जिन श्रेणियों से लिया जाये उनमें प्रख्यात न्यायवेत्ताओं की भी एक श्रेणी रखी जाये।

अच्छे व्यवहार के संबंध में मेरे माननीय मित्र प्रोफेसर शाह यह चाहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति उसी काल तक पदासीन रहे जब तक वह अच्छा व्यवहार करे। स्पष्टत: वह इसे भूल गये हैं कि इस प्रकार का उपबंध आगे है। इसमें कोई संदेह नहीं कि खंड (2) के प्रथम भाग में यह निश्चित रूप से निर्धारित नहीं किया गया है कि अच्छा व्यवहार करने पर ही कोई व्यक्ति पदासीन रहेगा किन्तु आगे यह उपबंध है कि प्रमाणित दुर्व्यवहार अथवा असामर्थ्य के आधार पर किसी व्यक्ति को पदच्युत किया जा सकेगा। मैं इसका यह अर्थ समझता हूं कि उच्चतम न्यायलय के न्यायाधीश के समान प्रतिष्ठित व्यक्ति के संबंध में आरम्भ में यह नहीं कहा गया है कि उसकी पदावधि का दुर्व्यवहार से कोई संबंध होगा अथवा किसी व्यक्ति को यह संदेह करने की आवश्यकता कि वह दुर्व्यवहार कर सकता है। आस्ट्रेलिया के संविधान में यह कहा गया है कि न्यायाधीश उसी समय तक नियुक्त रहे जब तक वह अच्छा व्यवहार करे। आगे यह उपबंध है कि दुर्व्यवहार करने पर वह पदच्युत किया जा सकता है। सारांश यह है कि यदि कोई न्यायाधीश दुर्व्यवहार का दोषी हो तो उसे हटाने के लिये उपबंध है। आरम्भ में ही यह कहना किसी विवाद के संबंध में यह कहने के समान है कि यदि वह मर जायेगा तो क्या होगा? कुछ ही संप्रदाय विवाह के समय जवाई के मर जाने की कल्पना करते हैं और उसके लिये प्रबंध करते हैं किन्तु अन्य संप्रदाय इस प्रकार की घटना को घटित न होने देने की ही अधिक चिन्ता करते हैं मैं यह रखना पसन्द न करूंगा कि कोई न्यायाधीश अच्छे व्यवहार के काल तक ही नियुक्त रहे। यदि उसने दुर्व्यवहार किया अथवा वह अयोग्य सिद्ध हुआ तो उसे हटाने के लिये पर्याप्त व्यवस्था है।

अब मैं 'पद' के संबंध में कुछ कहूंगा। श्री सन्तानम् ने खंड (7) की ओर संकेत किया और यह कहा कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की बिना राष्ट्रपति की सहमति के कोई लाभप्रद पद स्वीकार न करना चाहिये। मैंने और हम में से कई लोगों ने कुछ महत्त्वपूर्ण पदों पर ऐसे सैक्रेटरियों को देखा है जो 3000 से लेकर 4000 रु. तक का वेतन पाते थे और उद्योग व्यवसाय में लगे हुए कुछ लोगों की सहायता करते रहते थे और निवृत्त होने पर ही उनकी किसी न किसी संस्था के प्रबंधक हो जाते थे। मैं यह चाहता हूं कि लोग अपने को इस प्रकार बेच न दें। विशेषत: किसी न्यायाधीश के लिये तो यह एक बड़ी अनुचित बात होगी कि वह किसी व्यक्ति के पक्ष में निर्णय करे और फिर उसकी किसी सेवा में लग जाये। यह बात नहीं है कि इस उपबंध में यह अन्तिम रूप से कह दिया गया है और इसका प्रतिषेध है। राष्ट्रपति की सहमति से वह इसका निर्णय करेगा कि उसका नया पद उसके पिछले पद से असंगत तो नहीं है। राष्ट्रपति ठीक मामलों में यथेष्ट आज्ञा देगा। मैं इस सभा से अनुरोध करता हूं कि मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम् का यह प्रतिषेध मूलक संशोधन स्वीकार कर लिया जाये कि कोई व्यक्ति जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश रह चुका हो बिना राष्ट्रपति की सहमति के कोई लाभप्रद पद स्वीकार न करे।

अब मैं डा. सेन का संशोधन उठाता हूं जिसका आशय यह है कि न्यायाधीशों को रोगवश पूरे काल तक कार्य न कर सकने पर भी निवृत्ति वेतन दिया जाये। जो लोग न्यायाधीश नियुक्त होंगे वे तीन प्रकार के होंगे। जो लोग सेवा में लगे होंगे वे निवृत्ति-वेतन अवश्य ही पायेंगे। वे कार्य काल के पहले भी निवृत्त हो सकते हैं। वकीलों में से जो लोग लिये जायेंगे वे उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त होने तक बूढ़े हो जायेंगे और पर्याप्त ख्याति तथा धन प्राप्त कर चुके होंगे। उनके संबंध में भी यह व्यवस्था अनावश्यक है। इसमें कुछ संदेह नहीं कि मैं उनके इस सुझाव से सहमत हूं कि केवल उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये ही नहीं किन्तु मंत्रियों के लिये भी एक राष्ट्रीय निवृत्ति वेतन योजना निश्चित की जानी चाहिये और वास्तव में इस योजना से उन लोगों को भी लाभ होना चाहिये जो राष्ट्र की महान सेवा कर चुके हैं। पद निवृत्ति के पश्चात् अथवा ऐसे काल के पश्चात् जब देश यह समझे कि अब उनकी लोक-सेवा की आवश्यकता नहीं है उन्हें सड़कों पर न पटक देना चाहिये और इस प्रकार की कोई योजना बनानी चाहिये। उस योजना से सभी लोगों को न कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को ही लाभ होना चाहिये।

जिन संशोधनों को मैंने स्वीकार किया है उनके अतिरिक्त मैं अन्य संशोधनों का विरोध करता हूं। मैं सभा से यह अपील करता हूं कि वह इसकी ओर ध्यान दें कि अन्य संशोधन केवल रस्मी हैं अथवा इस उपबंध में सन्निहित इस योजना के विरोध में हैं कि न्यायपालिका का कार्यपालिका से किसी प्रकार का संबंध न रहे।

***अध्यक्ष:** मि. नजीरुद्दीन अहमद! आप अन्तिम वक्ता होंगे। आपके भाषण के बाद हम विचार-विमर्श समाप्त कर देंगे।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बगाल : जनरल): अध्यक्ष महोदय, माननीय प्रधानमंत्री ने अपने भाषण द्वारा इस प्रश्न पर प्रकाश डालकर बुद्धिमान लोगों का जो वास्तविक चित्र हमारे सामने उपस्थित किया है उसके लिये हम उनके आभारी हैं। वास्तविक योग्यता प्राप्त लोगों के संबंध में आप कोई आयु-सीमा निश्चित नहीं कर सकते। दो माननीय सदस्यों ने केवल संघ न्यायालय के न्यायाधीशों के संबंध में ही आयु-सीमा रखने का प्रयास नहीं किया है बल्कि यह भी कहा है कि साठ वर्ष में सभी प्रकार का बौद्धिक बल परिसीमित हो जाता है। मेरा यह निवेदन है कि यदि परखने की यही कसौटी रखी गई तो पंडित जवाहरलाल नेहरू भी, जो इकसठ वर्ष के हो गये हैं, किसी सार्वजनिक पद के लिये अयोग्य समझे जायेंगे। श्री के.एम. मुंशी भी, जो बासठ वर्ष के हो गये हैं इसी प्रकार अयोग्य समझे जायेंगे। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, जो छयासठ वर्ष के हो गये हैं और भी अयोग्य समझे जायें और सरदार पटेल, जो चौहत्तर वर्ष के हैं, और देश के एक भूषण हैं तथा जिनकी बुद्धि पहले के समान ही प्रखर है इस तर्क के अनुसार अयोग्य ही समझे जायेंगे। वास्तविक योग्यता प्राप्त लोगों के लिये साठ वर्ष की आयु-सीमा निश्चित करना निरर्थक है और मैं तो यह कहूंगा कि लड़कपन है। एक सदस्य महोदय तो यहां तक कह गये कि साठ वर्ष में मनुष्य बुद्धि शून्य हो जाता है और किसी प्रकार का भी बौद्धिक कार्य नहीं कर सकता है। उनकी यह धारणा है कि मनुष्य में जितना यौवन हो उतनी ही उसकी बुद्धि प्रबल होती है। वास्तव में वे तो यह कहेंगे कि आयु की वृद्धि

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

के अनुपात से बुद्धि का ह्रास होता है। दूसरे शब्दों में मनुष्य जितना युवा हो उतना ही उसका मस्तिष्क न्याय-संबंधी अथवा अन्य प्रकार के बौद्धिक कार्य करने के लिये परिपक्व होता है। यह सब अनर्गल बातें हैं।

यद्यपि हमारे प्रधानमंत्री महोदय ने पैंसठ वर्ष की आयु-सीमा रखी है किन्तु उनके प्रति आदर प्रकट करते हुए मैं अड़सठ वर्ष की आयु-सीमा के प्रस्ताव का समर्थन करता हूं। मैं इन कारणों से यह कर रहा हूं। विधि-वृत्ति में सुयोग्य व्यक्तियों की बहुत आयु हो जाती है। यदि वे न्यायाधीश नियुक्त होंगे तो उन्हें बहुत त्याग करना पड़ेगा। यदि आप पैंसठ वर्ष की आयु निश्चित करते हैं तो सुयोग्य विधि-वेत्ताओं को न्यायाधीशों के उच्च पदों को स्वीकार करने के लिये कुछ भी प्रोत्साहन न मिलेगा। खंड (6) में पैंसठ वर्ष की आयु रखी गई है परन्तु साथ ही उसके बारे में यह भी कहा गया है कि वह किसी न्यायालय में वकालत न करेगा। यह एक बहुत उपयुक्त शर्त है किन्तु इससे पैंसठ वर्ष की आयु-सीमा का खंडन होता है। पैंसठ वर्ष की आयु में सुयोग्य व्यक्तियों की बुद्धि प्रखर रहती है और यदि उन्हें न्यायालयों में वकालत न करने दी गई, यद्यपि मेरे विचार से करने दी जानी चाहिये, तो उनकी आयु-सीमा बढ़ा देनी चाहिये। वास्तव में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को बहुत ही उच्च कोटि के न्याय संबंधी कर्त्तव्यों का पालन करना होगा। यदि आप पैंसठ वर्ष की आयु-सीमा निश्चित करते हैं तो आप उत्कृष्ट योग्यता तथा अनुभव रखने वाले लोगों को देश की सेवा में न लगा सकेंगे। इस स्थिति में मेरे विचार से अड़सठ वर्ष की आयु-सीमा रखी जानी चाहिये।

उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को राष्ट्रपति की अनुमति से लाभप्रद सरकारी पदों को स्वीकार करने देने से एक दूषित सिद्धांत प्रयोग में आ जायेगा। उच्च कोटि के न्यायाधिकारियों को सरकारी पदों को स्वीकार करने के लिये कभी भी प्रोत्साहित न करना चाहिये। न्यायाधीश पदों से निवृत्त होने पर उन्हें सरकार से किसी पद की आशा न करनी चाहिये। श्री सन्तानम् ने सुयोग्य व्यक्तियों के प्रवेश न होने के संबंध में जिस कठिनाई का अनुभव किया है वह उनके संशोधन से दूर नहीं होती। वह आयु को बढ़ाकर अड़सठ वर्ष कर देने से दूर हो जायेगी। इंग्लैंड में साधारण न्यायाधीशों को 72 वर्ष की आयु में निवृत्त किया जाता है किन्तु उन उच्चतम न्यायाधीशों के लिये जो न्याय विशारद होते हैं कोई आयु-सीमा नहीं है। वे सम्राट के प्रसादकाल तक पदासीन रहते हैं और इसका अर्थ यह है कि वे कार्यकुशल रहते हैं। इंग्लैंड में न्यायाधीश के कार्य कौशल को कई प्रकार परख लिया जाता है। यहां साधारणतया प्रिवी कौंसिल और लार्ड सभा के सबसे ऊंचे न्यायाधिकारी की आयु कम से कम सत्तर वर्ष होती है। साधारणतया उच्च कोटि के न्याय पदों पर अस्सी वर्ष के न्याय विशारद आसीन रहते हैं। हमें माननीय प्रधानमंत्री महोदय ने बताया है कि वहां 90 वर्ष की आयु के अथवा इससे अधिक आयु के लोग बड़ी कुशलता से कार्य करते रहते हैं। प्रिंवी कौंसिल और लार्ड सभा के कुछ महान निर्णय ऐसे लोगों ने सुनाये जो 80 वर्ष अथवा 90 वर्ष की आयु के थे। यह कहा गया है कि भारत की जलवायु में अधिक आयु तथा कार्यकौशल का सामंजस्य नहीं है। मेरा यह निवेदन है कि यह एक तर्क विरुद्ध बात है। अंग्रेजों ने उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की आयु

साठ वर्ष और साधारण अधिकारियों की आयु पचपन वर्ष निश्चित कर दी थी। उन्होंने योग्यता के विकास के लिये कोई स्थान नहीं रखा था। वे चाहते थे कि उनके अधिकारियों को केवल यंत्रों के समान अथवा लिपिकों के समान कार्य करने की योग्यता प्राप्त हो। वे किसी नवीन कार्य करने के लिये और कार्य-स्वातंत्र्य अथवा विचार-स्वातंत्र्य के लिये प्रोत्साहन नहीं देते थे और सरकारी सेवा में लगे हुए लोगों की बुद्धि कुंठित कर देते थे। श्रीमान्, अब ये दूषित बातें न रहेंगी। अब स्वछंद वातावरण में हमारे अधिकारियों की योग्यता बढ़ जायेगी। उनमें नवीन कार्य करने की शक्ति होगी और अपने देश के लिये उत्कृष्ट कार्य करने के लिये देश-प्रेम होगा। पचपन अथवा साठ वर्ष की कृत्रिम आयु-सीमा रखने के लिये अब आयु-सीमा को बढ़ा देना चाहिये। विशेषतया न्यायाधीशों के उच्च पदों के लिये मैं बहुत विचार करने के बाद यह मत प्रकट करता हूं कि कम से कम आयु साठ वर्ष की होनी चाहिये। साठ वर्ष के पूर्व बहुत कम न्यायाधिकारी कार्य कुशल होते हैं। उच्च कोटि के न्यायवेत्ताओं के बुद्धि बल तथा अनुभव का परिचय साठ वर्ष के उपरांत ही मिलता है। मुझे तो प्रसन्नता होती यदि इससे भी ऊंची आयु-सीमा रखी जाती। किन्तु इस दशा में इसकी आवश्यकता होती कि वह राष्ट्रपति के प्रसाद-काल तक ही पदासीन रहता। किन्तु यह समझा गया है कि यह उच्च कोटि के न्यायवेत्ताओं के मार्ग में बाधक सिद्ध हो सकता है। इसलिये मैं यह नहीं चाहता कि उच्च कोटि के न्यायाधिकारी राष्ट्रपति के प्रसाद-काल तक ही पदासीन रहें। इसलिये मैं कोई आयु-सीमा न रखने और पैंसठ वर्ष की आयु रखने के बीच की एक बात का सुझाव रखता हूं और वह यह है कि अड़सड़ वर्ष की आयु निश्चित की जाये। न्यायाधिकारियों को बहुत उच्च कोटि के कर्त्तव्यों का पालन करना होता है। उनको बेकार वेतन नहीं दिया जाता। उनको बहुत काम करना होता है। अपनी वकालत छोड़कर उच्च न्याय पदों को स्वीकार करने के लिये उन्हें यह दिखाई देना चाहिये कि भविष्य में उन्हें दीर्घ काल तक कार्य करना होगा और उनका कार्य उपयोगी सिद्ध होगा। वास्तव में इसके विरुद्ध यह कहा गया है कि लोक सेवा के अर्थ त्याग करने की भावना से लोगों को इन पदों को स्वीकार करना चाहिये। मेरे विचार से जो व्यक्ति अपनी लाभप्रद वकालत को छोड़ेगा वह बहुत त्याग करेगा। त्याग की भी कुछ सीमा होनी चाहिये। इन कारणों को ध्यान में रखते हुए मेरा यह निवेदन है कि उनकी आयु-सीमा बढ़ा दी जानी चाहिये। एक अन्य प्रसंग में मैं यह भी निवेदन करने का प्रयास करूंगा कि उनके वेतन पर भी यथोचित विचार किया जाये। मेरा यह निवेदन है कि इस विचार-विमर्श से बहुत सी बातें स्पष्ट हुई हैं और उनकी ओर हमें यथेष्ट ध्यान देना चाहिये। कम से कम यह तो पूर्णतया स्पष्ट हो गया है कि यह गलत है कि साठ वर्ष के बाद लोग कार्य कुशल नहीं रहते। मेरा यह निवेदन है कि जो संशोधन मैंने उपस्थित किया है उसे यह सभा भले ही स्वीकार न करे किन्तु उसमें सन्निहित सिद्धांत याद रखे जायेंगे और एक दिन वह आयेगा जब हम कम से कम अपने सर्वोच्च न्यायाधिकारियों की आयु-सीमा बढ़ाने के लिये बाध्य हो जायेंगे।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से अब हमें विचार-विमर्श समाप्त कर देना चाहिये। हम कई भाषण सुन चुके हैं।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): किन्तु अभी तक केवल वकील ही बोले हैं।

***अध्यक्ष:** यदि आप लोग बोलना चाहते हैं तो मैं आपको रोकूंगा नहीं किन्तु मेरे विचार से बहुत विचार-विमर्श हो चुका है। सभी भाषण वकीलों ही के नहीं थे। उदाहरणार्थ श्री सिधवा वकील नहीं हैं।

डा. अम्बेडकर, क्या आप संशोधनों के संबंध में कुछ कहेंगे?

***माननीय डा. बी.आर अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं दो संशोधनों को स्वीकार करने के लिये तैयार हूं। उनमें से एक, संशोधन संख्या 1829 है जिसे श्री सन्तानम् से उपस्थित किया है और दूसरा, संशोधन संख्या 1845 है जिसे श्री कामत ने उपस्थित किया है और जिसके द्वारा उन्होंने यह प्रस्ताव रखा है कि न्यायवेत्ता भी उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश चुना जाये। किन्तु श्री कामत के संशोधन संख्या 1845 के संबंध में मैं यह कहना चाहता हूं कि मैं अभी इसका निश्चय नहीं कर सका हूं कि हम प्रसंग में 'distinguished' (प्रतिष्ठित) शब्द उपयुक्त है या नहीं। मुझे यह परामर्श दिया गया है की 'eminent' (प्रख्यात) शब्द अधिक उपयुक्त होगा। किन्तु जैसा कि मैं कह चुका हूं मैं अभी इस संबंध में निश्चय नहीं कर सका हूं और इसलिये मैं मसौदा-समिति की ओर से यह बात कहना चाहता हूं कि उसे संविधान का मसौदा दुहराते समय इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह 'प्रतिष्ठित' शब्द को स्वीकार करे अथवा उसके स्थान में 'प्रख्यात' शब्द अथवा कोई अन्य उपयुक्त शब्द रखे दे।

श्रीमान्, इस अनुच्छेद के संबंध में जो बहुत से संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनमें से वास्तव में तीन प्रश्न उठाये गये हैं। पहला प्रश्न तो यह है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश किस प्रकार नियुक्त किये जायें? इस प्रश्न के संबंध में जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनका वर्गीकरण करने से वे तीन प्रकार के दिखाई देते हैं। एक प्रस्ताव यह है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश मुख्य-न्यायाधिपति की सहमति से नियुक्त किये जायें। यह एक दृष्टिकोण है। दूसरा दृष्टिकोण इस प्रकार है कि राष्ट्रपति जो नियुक्तियां करे उनका समर्थन संसद के दो-तिहाई बहुमत से होना चाहिये। तीसरा सुझाव इस प्रकार का है कि वे राज्य-परिषद् से परामर्श लेकर नियुक्त किये जाने चाहियें।

इस संबंध में मैं इसे स्वीकार करता हूं कि जो प्रश्न उठाया गया है वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस संबंध में इस सभा में किसी प्रकार का मतभेद न होना चाहिये कि हमारी न्यायपालिका का कार्यपालिका से कोई संबंध न होना चाहिये और उसमें योग्य व्यक्ति होंगे। प्रश्न यह है कि इन दो उद्देश्यों की पूर्त्ति किस प्रकार हो। अन्य देशों में इस प्रश्न को दो प्रकार से हल किया गया है। इंग्लैंड में सम्राट बिना किसी परिसीमा के नियुक्तियां करता है जिसका अर्थ यह है कि सामयिक कार्यपालिका नियुक्तियां करेगी। संयुक्त राज्य अमरीका में इससे बिल्कुल भिन्न प्रणाली प्रयोग में है और वहां उच्चतम न्यायालय के पदों तथा राज्य के अन्य पदों के लिये नियुक्तियां सीनेट की सहमति से ही की जाती है। मुझे यह दिखाई देता है कि अपनी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा इसे भी ध्यान में रखते हुए इस देश में उत्तरदायित्व की भावना अभी उतनी नहीं है जितनी संयुक्त राज्य

अमरीका में है। यह खतरनाक सिद्ध होगा कि राष्ट्रपति बिना किसी परिसीमा के नियुक्तियां करे अर्थात् सामयिक कार्यपालिका के परामर्श से ही नियुक्तियां करे। इसी प्रकार कार्यपालिका की प्रत्येक नियुक्ति के संबंध में विधानमंडल की सहमति प्राप्त करना भी बहुत उपयुक्त उपबंध नहीं हैं इस प्रथा के बहुत बोझल होने के अतिरिक्त उसके अधीन यह भी सम्भावना रहेगी कि राजनैतिक दबाव तथा राजनैतिक बातों का नियुक्तियों पर प्रभाव पड़ेगा। मसौदे में जो अनुच्छेद है उसमें मध्यम मार्ग का अनुसरण किया गया है। उसके अधीन नियुक्तियों के संबंध में राष्ट्रपति उच्चतम तथा अन्तिम प्राधिकारी नहीं है और न विधानमंडल का ही प्रभाव पड़ता है। इस अनुच्छेद में इस प्रकार का उपबंध है कि ऐसे लोगों से परामर्श लिया जाये जो इतने सुयोग्य हों कि इस प्रकार के विषयों पर यथोचित परामर्श दे सकें और मेरे विचार से इस प्रकार का उपबंध फिलहाल पर्याप्त समझा जाये।

मुख्य न्यायाधिपति की सहमति के संबंध में मुझे यह दिखाई देता है कि जो लोग इस प्रस्ताव के समर्थन में हैं उनका मुख्य न्यायाधिपति की निष्पक्षता और ठीक निर्णय पर विश्वास है मेरी अपनी यह धारणा है कि मुख्य न्यायाधिपति निस्संदेह एक प्रख्यात व्यक्ति होगा। मेरी अपनी यह धारणा है कि निस्संदेह न्यायाधिपति बहुत ही प्रख्यात व्यक्ति होगा किन्तु फिर भी न्यायाधिपति में भी साधारण मनुष्यों की कमजोरियों तथा भावनाएं होंगी। मेरे विचार से न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में मुख्य न्यायाधिपति के मत को मानने का अर्थ यह होगा कि उसे वह अधिकार प्राप्त हो जायेगा जो हम न तो राष्ट्रपति को और न तत्कालीन सरकार को देने के लिये तैयार हैं। इसलिये मेरे विचार से यह भी एक खतरनाक प्रस्ताव है।

इस अनुच्छेद के संबंध में जो विभिन्न संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनके द्वारा जो दूसरा प्रश्न उठाया गया है वह है आयु का प्रश्न। आयु के संबंध में अनेक प्रकार के विचार प्रकट किये गये हैं। कुछ लोगों का यह विचार है कि न्यायाधीशों को साठ वर्ष की आयु प्राप्त करने पर निवृत्ति हो जाना चाहिये। जहां तक उच्च न्यायालयों का संबंध है उनमें इस समय यही होता है। कुछ लोगों का यह कहना है कि संविधान में कोई भी आयु न रखी जानी चाहिये और संसद को विधि द्वारा आयु-सीमा निश्चित करनी चाहिये। मेरे विचार से यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह संसद पर छोड़ दिया जाये कि वह समय-समय पर आयु निश्चित करे तो कोई भी व्यक्ति न्यायाधीश होने के लिये तैयार न होगा क्योंकि न्यायाधीश पद स्वीकार करने के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति यह जानना चाहेगा कि वह साधारणतया कितने काल के लिये उस पद पर रहेगा। इसलिये मुझे यह कहने में कुछ भी संकोच नहीं है कि समय समय पर संसद आयु के संबंध में उपबंध निश्चित नहीं कर सकती बल्कि उसे संविधान में ही निश्चित करना होगा। दूसरा दृष्टिकोण यह है कि यदि कोई भी आयु-सीमा रखी गई तो उसका अर्थ यह होगा कि आप ऐसे लोगों को हट जाने के लिये बाध्य कर रहे हैं जो हमारी निश्चित की हुई आयु अर्थात् 65 वर्ष के होने पर भी हृष्ट-पुष्ट हों ओर कई वर्षों तक यथेष्ट रूप से देश की सेवा कर सकते हों। मैं इस मत को पूर्णतया स्वीकार करता हूं कि यह नहीं माना जा सकता कि पैंसठ वर्ष की आयु में मनुष्य के बौद्धिक बल का शून्यन हो जाता है। साथ ही मेरे विचार से जिन माननीय सदस्यों ने इस आशय के संशोधन उपस्थित किये हैं वे उस

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

उपबंध को भूल गये हैं जो हमने अनुच्छेद 107 में रखा है और जिसमें हमने यह कहा है कि मुख्य न्यायाधिपति की इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह किसी निवृत्त न्यायाधीश से किसी विशेष मामले या मामलों के संबंध में निर्णय करने को कहें। इसलिये अनुच्छेद 107 के इस उपबंध के फलस्वरूप, मैं यह कहूंगा कि इसकी संभावना न रह जायेगी कि ऐसे लोगों के बुद्धि बल का प्रयोग न किया जा सके जो उच्चतम न्यायालय में कार्य कर चुके हों। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि आयु सम्बन्धी विचार-विमर्श के समय जो तर्क उपस्थित किये गये और जो भय प्रकट किया गया उसका कोई आधार नहीं है।

इस संशोधन सम्बन्धी वाद-विवाद में जो तीसरी बात कहीं गई थी उसे में अब उठाता हूं। वह न्यायपालिका के सदस्यों के निवृत्त होने पर पद स्वीकार करने का प्रश्न है। इस सम्बन्ध में दो संशोधन उपस्थित किये गये हैं। एक प्रोफेसर के.टी. शाह ने उपस्थित किया है और दूसरा श्री जसपतराय कपूर ने। मेरा अपना विचार यह है कि इनमें से कोई भी संशोधन स्वीकार नहीं किया जा सकता। ये संशोधन बहुत कुछ उन उपबंधों के आधार पर उपस्थित किये गये हैं जो संविधान के मसौदे में लोक सेवा आयोग के संबंध में रखे गये हैं। मेरे विचार से न्यायपालिका के सदस्यों में तथा संघीय लोक सेवा आयोग के सदस्यों में आधारभूत अन्तर है। यह अन्तर यह है। लोक सेवा आयोग सरकार की सेवा करता है और ऐसे विषयों के संबंध में निर्णय करता है जिनमें सरकार की दिलचस्पी होती है अर्थात् वह असैनिक सेवाओं के लिये लोगों को नियुक्त करता है। यह हो सकता है कि किसी विभाग का मंत्री लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य को यह वचन देकर उस पर प्रभाव डाल सकता है कि यदि वह उस प्रार्थी की सिफारिश करे जिसमें उसकी दिलचस्पी है तो उसे निवृत्त होने पर कोई अन्य पद दे दिया जायेगा। लोक सेवा आयोग का कार्यपालिका से बहुत निकट संबंध रहता है। दूसरे शब्दों में लोक सेवा आयोग हमेशा ऐसे विषयों का निर्णय करता रहता है जिनमें कार्यपालिका की बहुत दिलचस्पी होती है। किन्तु न्यायपालिका ऐसे विषयों के संबंध में निर्णय करती है जिनमें सरकार की बहुत कम दिलचस्पी रहती है अथवा कुछ भी दिलचस्पी नहीं रहती। न्यायपालिका प्रायः नागरिकों के आपस के मामलों का निर्णय करती है और यदाकदा नागरिकों और सरकार के बीच किसी मामले का निर्णय करती है। इसलिये इसकी बहुत कम संभावना है कि सरकार न्यायपालिका के किसी सदस्य पर प्रभाव डालेगी। इसलिये मेरा अपना मत यह है कि लोक सेवा आयोग के संबंध में जो उपबंध हैं वे न्यायपालिका के संबंध में प्रयोग में नहीं आ सकते। इसके अतिरिक्त कई मामले ऐसे होते हैं जिनके संबंध में न्याय संबंधी उत्कृष्ट योग्यता रखने वाले लोगों को काम में लगाना आवश्यक हो जाता है। हमारे मित्र श्री वर्दाचार्य के उदाहरण को लीजिये। वे अब उस आयोग के सदस्य नियुक्त किये गये हैं जो आय कर के प्रश्नों के संबंध में अनुसंधान कर रहा है।

***श्री जसपतराय कपूरः** यह अवैतनिक रूप से किया जाना चाहिये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** जी नहीं, उन्हें वेतन दिया जाता है। वह सम्राट के अधीन लाभप्रद पद पर नियुक्त किये गये हैं।

इसलिये न्याय-विशारदों के अतिरिक्त इन पदों पर और कौन लोग नियुक्त किये जा सकते हैं? यदि इस प्रकार के लोग जिनमें इस प्रकार के कार्य करने की क्षमता है

ऐसे उपबंधों से कार्य करने से वंचित कर दिये जायें जैसे कि श्री जसपतराय कपूर ने प्रस्तावित किये हैं तो बड़ी कठिनाई उत्पन्न हो जायेगी। मैं यह कह चुका हूं कि कार्यपालिका और न्यायपालिका इतने पृथक हैं कि कार्यपालिका को न्यायपालिका के निर्णयों पर प्रभाव डालने का कोई अवसर ही न मिलेगा। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि जिस उपबंध का प्रस्ताव रखा गया है वह अनावश्यक है। मैं इन सभी संशोधनों का विरोध करता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (1) में 'Chief Justice' (मुख्य न्यायाधीश) शब्दों के पूर्व 'Supreme' (उच्चतम) शब्द प्रविष्ट किया जाये।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (1) में 'and such number of other judges not being less than seven, as Parliament may by law prescribe' शब्दों के स्थान में 'and until Parliament by law prescribes a larger number of seven other judges' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'Every Judge of the Supreme Court shall be appointed by the President by warrant under his hand and seal and shall hold office until he attains the age of sixty-five years:

Provided that in the case of appointment of a Judge, other than the Chief Justice, the Chief Justice of India shall always be consulted.' ''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताय यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखे जायें:

'(2) The Chief Justice of Bharat, who shall be the Chief Justice of the Supreme Court, shall be appointed by the President subject to confirmation by two-thirds majority of the total number of members of Parliament assembled in a joint session of both the Houses of Parliament.' ''

[अध्यक्ष]

'(3) Every judge of the Supreme Court shall be appointed on the advice of the Chief Justice of Bharat by the President under his hand and seal and shall hold office until he attains the age of sixty-five years:

Provided that—

(a) a judge may, by writing under his hand addressed to the President, resign his office;

(b) a judge may be removed from his office in the manner provided in clause (5).' ''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) और खंड (2) के प्रथम परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

(2) Every judge of the Supreme Court other than the Chief Justice of India shall be appointed by the President by warrant under his hand and seal after consultation with the judges of the Supreme Court and Chief Justice of High Courts in the States and with the concurrence of the Chief Justice of India; and the Chief Justice of India shall be appointed by the President by a warrant under his hand and seal after consultation with the judge of the Supreme and the Chief Justices of the High Court in the States and every judge of the Supreme Court shall hold office until he attains the age of sixty-eight years.' ''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'with' शब्द के बाद 'the Council of States and' शब्द रखे जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'may be' शब्दों के स्थान में 'the President may deem' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'until he attains the age of sixty-five years' शब्दों के स्थान में 'during good behaviour or until he resigns; provided that any such judge may resign his office at any time after 10 years of service in a judicial office and if he so resigns, he shall be entitled to such pension as may be allowed under the law passed by the Parliament of India for the time being in force' शब्द रखे जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'sixty-five' शब्द के स्थान पर 'sixty' शब्द रखा जाये और 'the President, however, may in any case extend from year to year the age of retirement up to sixty-five years' शब्द जोड़ दिये जायें।''

***श्री जसपतराय कपूर:** श्रीमान्, सभा यदि आज्ञा दे तो मैं अपना संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** श्री मोहनलाल गौतम का संशोधन संख्या 1834 भी है। मैंने उन्हें उसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी थी क्योंकि उसका आशय संशोधन संख्या 1883 से पूरा हो जाता था। क्या वे यह चाहते हैं कि मैं उस पर मत लूं?

***श्री मोहनलाल गौतम** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, सभा यदि आज्ञा दे तो मैं अपना संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) में 'until he attains the age of 65 years' शब्दों के स्थान में 'for such period as may be fixed in this behalf by Parliament by law' शब्द रखे जायें।''

***श्री सतीश चन्द्र:** श्रीमान्, सभा यदि आज्ञा दे तो मैं अपना संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के पहले परन्तुक में 'the Chief Justice of India shall always be consulted' शब्दों के स्थान में 'it shall be made with the concurrence of the Chief Justice of India' शब्द रखे जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के दूसरे परन्तुक के बाद निम्नलिखित नया परन्तुक प्रविष्ट किया जाये:

'Provided further that where a Judge resigns his office on grounds of ill-health, he shall be entitled to pension as if he has continued in service until the age of sixty-five years.' ''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** श्री जसपतराय कपूर ने इस संशोधन पर एक संशोधन उपस्थित किया है। यह सूची 2 का संशोधन संख्या 41 है और इस प्रकार है:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1843 में अनुच्छेद 103 के प्रस्तावित नवीन खंड (2ए) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(2A) No Judge of the Supreme Court shall be eligible for further office of profit either under the Government of India or under the Government of any State after he has ceased to hold his office.' ''

***श्री जसपतराय कपूर:** मैं यह नहीं चाहता कि यह बहुत ही उपयोगी संशोधन गिर जाये। इसलिये यदि सभा आज्ञा दे तो मैं इस संशोधन को वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं प्रोफेसर के.टी. शाह के मूल संशोधन को सभा के सामने रखता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (2) के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ दिया जाये:

'(2A) Any person who has once been appointed as Judge of any High Court or Supreme Court shall be debarred from any executive office under the Government of India or under that of any unit, or, unless he has resigned in writing from his office as Judge, from being elected to a seat in either House of Parliament, or in any State Legislature.' ''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** मैं संशोधन संख्या 1845 को संशोधित रूप में सभा के सामने रखता हूं। प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (3) में निम्नलिखित नवीन खंड जोड़ दिया जाये:

'(c) or is an eminent jurist.' ''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (3) के उपखंड (बी) के बाद निम्नलिखित नवीन उपखंड प्रविष्ट किया जाये:

'(c) has been a Pleader in one or more District Courts for at least twelve years.''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (3) की व्याख्या 1 के बाद निम्नलिखित नवीन व्याख्या प्रविष्ट की जाये और नवीन व्याख्या की गणना तदनुसार की जाये:

'Explanation II.–In this clause District Court means a District Court which exercises or which before the commencement of this Constitution exercised jurisdiction in any district of the territory of India.' ''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (3) की व्याख्या (2) में जहां कहीं 'advocate' शब्द आया है उसके बाद 'or a Pleader' शब्द रखे जायें और 'a person held judicial' शब्दों के स्थान में 'such person held judicial' शब्द रखे जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''खंड (3) में व्याख्या (2) के बाद 'judicial office' शब्दों के बाद 'not inferior to that of a district judge' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (4) में 'supported by not less than two-thirds of the members present and voting has been presented to the President by both Houses of Parliament' शब्दों के स्थान में 'by each House of Parliament supported by a majority of the total membership of that House and by a majority of not less than two-thirds of the members of that House present and voting has been presented to the President' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (4) में 'passed' शब्द के बाद 'after a Committee consisting of all the Judges of the Supreme Court had investigated the charge and reported on it to the President and' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (4) में 'not less than two-thirds' शब्दों के स्थान में 'a majority' शब्द रखे जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (6) में 'a declaration' शब्दों के स्थान में 'an affirmation or oath' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 का खंड (7) निकाल दिया जाये।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103 के खंड (7) में 'any authority' शब्दों के बाद 'or shall hold any office of profit without the previous permission of the President' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं समूचे अनुच्छेद को, स्वीकृत संशोधनों द्वारा संशोधित रूप में, सभा के सामने रखता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 103, संशोधित रूप में, स्वीकार कर लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 103, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 103-ए

***डा. पी.के. सेन:** इस संशोधन के संबंध में अपने विचार प्रकट करने के लिये मैं अधिक समय नहीं लेना चाहता हूं। वास्तव में सभा को यह स्मरण होगा कि जब मैं संशोधन संख्या 1842 को उपस्थित कर रहा था तो मैंने इस संशोधन की ओर तथा इस में सन्निहित सिद्धांत की ओर संकेत किया था, वह सिद्धांत यह है कि जो व्यक्ति न्यायाधीश रह चुका हो उसे बाद को अपने लिये पद ढूंढने की आवश्यकता न पड़नी चाहिये और इस उद्देश्य से उसे राजनैतिक दलों तथा कुछ व्यक्तियों की खुशामद करके अपने पद की प्रतिष्ठा न गिरानी चाहिये। वास्तव में जो विचार-विमर्श हमने अभी सुना है उसमें कई प्रसंगों में इसकी चर्चा की गई है और मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि मुझे संविधान में इस आशय का कोई उपबंध नहीं दिखाई देता। मेरे विचार से यह बहुत ही आवश्यक है कि किसी न्यायाधीश को अपना पद छोड़ने पर किसी अन्य पद की खोज में न रहना चाहिये। इस कारण, विशेषतया हमारे देश के लिये, इस उपबंध का बहुत महत्त्व है क्योंकि यहां ऐसे लोग भी रहे हैं जो पहले न्यायपालिका के अधिकारी थे, फिर कार्यपालिका के अधिकारी हो गये और फिर न्यायपालिका में ही किसी पद पर नियुक्त हो गये। इस प्रकार की बातें न होने दी जानी चाहियें। इसी कारण मैं इस संशोधन को उपस्थित करता रहा हूं और मुझे आशा है कि यह सभा इसे स्वीकार कर लेगी।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** किन्तु यह संशोधन रस्मी तौर पर उपस्थित नहीं किया गया है।

***अध्यक्ष:** प्रस्तावक महोदय यह कहते हैं कि उन्होंने उसे उपस्थित कर दिया है।

***डा. पी.के. सेन:** मैंने इस समय इसे अभी उपस्थित नहीं किया है। पिछले एक अवसर पर जब मैं संशोधन संख्या 1842 उपस्थित कर रहा था तो मैंने इसकी ओर संकेत किया था। इसलिये श्रीमान्, मैं उसे रस्मी तौर पर उपस्थित करता हूं। वह इस प्रकार है:

> ''अनुच्छेद 103 के बाद निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:
>
> '103-A. A person who is holding or has held the office of Judge of the Supreme Court shall not be eligible for appointment to any office of emolument under the Government of India or a State, other than that of the Chief Justice of India or the Chief Justice of a High Court:
>
> Provided that the President may, with the consent of the Chief Justice of India, depute a Judge of the Supreme Court temporarily on other duties:
>
> Provided further that this article shall not apply in relation to any appointment made and continuing while a Proclamation of Emergency is in force, if such appoointment is certified by the President to be necessary in the national interest.' ''

[डा. पी.के. सेन]

इन अवसर पर राज्य को इसकी आवश्यकता पड़ेगी कि वह अनुभवी लोगों को सेवा में लगाये... (*विघ्न*)।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि क्या माननीय सदस्य महोदय इस संशोधन को उपस्थित कर सकते हैं चूंकि सभा संशोधन संख्या 1865 को अस्वीकार कर चुकी है? उस संशोधन में वही सिद्धांत सन्निहित है जो संशोधन संख्या 1870 में सन्निहित है।

***श्री जसपतराय कपूर:** संशोधन संख्या 1865 में 'of profit' शब्द नहीं आये हैं।

***अध्यक्ष:** प्रस्तावक महोदय ने 'of profit' शब्द जोड़ दिये थे।

***डा. पी.के. सेन:** जी नहीं, श्रीमान्, वह बहुत ही सीमित है और उसमें निश्चित रूप से यह नहीं कहा गया है कि किस प्रकार के पद निषिद्ध हैं। वास्तव में उसमें यह भी नहीं कहा गया है, कुछ आपात्तिक दशाओं में राष्ट्रपति यह विचार कर सकता है कि किसी व्यक्ति के परिपक्व ज्ञान तथा अनुभव की राज्य को आवश्यकता होगी और इन अवसरों पर उसे इस प्रकार के किसी पद पर नियुक्त करने से देश का हित साधना होगा। मैंने इस सभा के सम्मुख जो संशोधन रखा है उसमें यह अधिक स्पष्ट कर दिया गया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** संशोधन संख्या 1843 का आशय भी यही था।

***डा. पी.के. सेन:** कुछ सीमा तक यह कहा जा सकता है कि संशोधन संख्या 1843 से इस प्रस्ताव का आशय पूरा हो जाता है। मैं इसे आपके निर्णय के लिये छोड़ता हूं कि इस दृष्टि से यह आवश्यक है या नहीं और इस पर सभा को विचार करना चाहिये या नहीं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से जिस संशोधन की ओर संकेत किया गया है उससे नवीन अनुच्छेद 103-ए में परिभाषित सिद्धांत की पूर्त्ति हो जाती है। यह सच है कि इस संशोधन में एक दो बातें और कही गई हैं। जब सिद्धांत ही स्वीकार नहीं किया गया है तो उससे सम्बद्ध प्रश्नों पर विचार नहीं किया जा सकता। जब तक डा. सेन इस पर जोर नहीं देते हैं हम इस प्रस्ताव पर विचार न करेंगे। किन्तु यदि वे जोर देते हैं तो मुझे इस पर मत लेना होगा।

***डा. पी.के. सेन:** मेरी यह इच्छा है कि इस पर विचार-विमर्श किया जाये और इसके सम्बन्ध में निर्णय किया जाये। यदि आपका यह विचार है कि चूंकि संशोधन संख्या 1843 पर विचार हो चुका है इसलिये मैं इस संशोधन को उपस्थित नहीं कर सकता तो बात यहीं समाप्त हो जाती है।

***अध्यक्ष:** जैसा कि मैं कह चुका हूं, आपके संशोधन में कुछ अन्य बातें भी हैं। वैधानिक दृष्टि से उनका आशय संशोधन संख्या 1843 से पूरा नहीं होता है। किंतु उसमें वही सिद्धान्त सन्निहित है जो संशोधन संख्या 1843 में सन्निहित है। इसलिये मैं इसे आप पर छोड़ता हूं कि आप उसे उपस्थित करें या न करें।

***डा. पी.के. सेन:** श्रीमान्, मैं उसे उपस्थित करता हूं।

***श्री बी. दास:** मेरे मित्र डा. सेन ने, जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश रह चुके हैं, इस संशोधन को उपस्थित करके जिस आत्म-विश्वास का परिचय दिया है उसके लिये मैं उन्हें बधाई देता हूं। यद्यपि मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने यह आपत्ति की है कि यह संशोधन अनियमित है किन्तु मेरे विचार से उनकी आपत्ति ही अनियमित है। श्रीमान्, हम भारतीयों पर वकीलों का ही प्रभुत्व है। हमारे वकील ही हमारे संविधान को बनाते हैं, हमारी राजनीति पर नियंत्रण रखते हैं और यह सोचते हैं कि उच्च न्यायालयों और न्यायपालिका का पद उच्चतम है और किसी भी न्यायाधीश की आलोचना नहीं की जा सकती। श्रीमान्, हम सभी को विदित है कि हाल में एक मामले में इलाहाबाद के उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश ने जो निर्णय सुनाया था उसकी परीक्षा हो रही है जिससे यह प्रमाणित होता है कि न्यायाधीश भी गलती कर सकते हैं। हम यह भी जानते हैं कि लखनऊ के मुख्य न्यायालय के एक न्यायाधीश ने सत्तर वर्ष की आयु में यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि उनकी आयु दस वर्ष कम है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीश इस प्रकार के हैं और मैं इसे दुहराना चाहता हूं कि साधारण मनुष्य ही इस प्रकार की प्रकृति का परिचय देते हैं मेरे विचार से अग्रेजों की न्याय के सम्बन्ध में जो धारणा है जिसका भारत में पोषण होता रहा है उसका इस संविधान में पोषण न होना चाहिये। मैंने अपने संशोधन इस उद्देश्य से उपस्थित नहीं किये कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के निवृत्त होने पर उनको पद ढूंढने की प्रवृत्ति निर्बन्धित कर दी जाये। मेरे विचार से यदि खंड 103-ए स्वीकार कर लिया गया तो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश साधारण लोगों के समान हो जायेंगे और वे असाधारण लोग न समझे जायेंगे। वे यह समझते हैं कि वे असाधारण लोग हैं और उनसे कोई गलती हो ही नहीं सकती। किन्तु वकील न होने के कारण और लोगों का प्रतिनिधि होने के नाते मैं यह कह सकता हूं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश पूर्व ब्रिटिश अधिकारियों के समान कार्य करते हैं और उन्हीं की विचारधारा का अनुसरण करते हैं। एक दूसरे अनुच्छेद में, अर्थात् अनुच्छेद 104 में, जिस पर कुछ समय बाद विचार किया जायेगा, मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर ने यह रखा है कि पुराने भारत-सरकार के अधिनियम की व्यवस्था के समान उच्चतम न्यायालय के 5000 रु. का वेतन दिया जाये और अन्य न्यायाधीशों को 4000 रु. का वेतन दिया जाये। वे सभी भारतीय हैं और मैं यह भी आशा करता हूं कि वे देश भक्त भी हैं। यदि मेरे मित्र जो मंत्री हैं 3000 रु. का वेतन स्वीकार कर सकते हैं तो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश 5000 रु. अथवा 4000 रु. के वेतन की मांग किस प्रकार कर सकते हैं? मैं यह कहना चाहता हूं कि किसी भी व्यक्ति का भले ही वह उच्च पदाधिकारी हो, विशेष अधिकारों की मांग न करनी चाहिये। वे लोग केन्द्र में हमारे मंत्रियों से किसी प्रकार भिन्न नहीं हैं जो केवल 3000 रु. पाते हैं। मेरे विचार से कुछ प्रांतीय सरकारें अपने मंत्रियों को इससे भी कम वेतन देती हैं।

दूसरी बात यह है कि मद्रास के मित्रों को छोड़कर मैंने बिरला ही कोई उच्च न्यायालय का न्यायाधीश देखा है जो भारतीय वस्त्र पहनता है। भारत को स्वतंत्र हुए दो वर्ष बीत गये हैं। क्या कारण है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश अभी भी अंग्रेजी प्रणाली का ही अनुसरण करते हैं और अंग्रेजी पोशाक ही पहनते हैं? भारत के सभी उच्च न्यायालयों में भी यही होता है। ये लोग देश भक्त कैसे कहे जा सकते हैं? ये लोग किस प्रकार उच्च

[श्री बी. दास]

कोटि की न्याय-परम्परा बनाये रखेंगे और किस प्रकार लोगों में सामाजिक न्याय की नवीन भावना जागृत करेंगे? श्रीमान्, मुझे इसकी प्रसन्नता है कि मुझे डा. पी.के. सेन के संशोधन का हृदय से समर्थन करने का अवसर मिला। मैं उन्हें एक बार फिर इसके लिये बधाई देता हूं कि उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश होते हुए उन्होंने इस संशोधन को उपस्थित करके अपने आत्मविश्वास का परिचय दिया है। श्रीमान्, मैं आपको भी इस संशोधन को उपस्थित करने की आज्ञा देने के लिये बधाई देता हूं।

***डा. बक्शी टेकचन्द:** श्रीमान्, डा. पी.के. सेन ने जो संशोधन उपस्थित किया है वह अनियमित नहीं है। उसके द्वारा एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया गया है और मेरा इस सभा से यह निवेदन है कि इस पर विचार किया जाये। जिन संशोधनों पर विचार हो चुका है उनमें और इस संशोधन में यह अन्तर है कि इसमें ऐसे व्यक्ति के संबंध में भी विचार किया गया है जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश पद पर आसीन हो। इस संबंध में मैं सभा को यह स्मरण कराना चाहता हूं कि कई अवसरों पर संघ न्यायालय के न्यायाधीश ऐसे कार्यों में लगाये गये हैं जिनका न्याय से कोई संबंध नहीं था और जो एक प्रकार से राजनैतिक तथा कूटनीतिक कार्य थे। एक पदासीन न्यायाधीश युद्ध-परिषद् का सदस्य बनाकर इंग्लैंड भेजा गया था और उसके उपरांत मुख्य न्यायाधिपति के आपत्ति करने पर भी युद्ध-मंत्रिमंडल का सदस्य बना दिया गया था। जब वह इंग्लैंड में रहा उसने राजनैतिक कार्य ही नहीं किया बल्कि बहुत ही कटु साम्प्रदायिक प्रचार भी किया। यह बहुत ही आवश्यक है कि संविधान में ऐसा उपबंध रखा जाये कि भविष्य में इस प्रकार की बातें न हो सकें और पदासीन न्यायाधीश न्याय-संबंधी कार्य के अतिरिक्त अन्य किसी कार्य में न लगाये जा सकें। जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं और जिनमें से कुछ अस्वीकार हो चुके हैं उनमें तथा इस संशोधन में यही मुख्य अन्तर है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** इस संशोधन में 'has held' शब्द प्रयोग किये गये हैं।

***डा. बक्शी टेकचन्द:** संशोधन में ये शब्द हैं। 'a person who is holding or has held the office of Judge' (कोई व्यक्ति जो न्यायाधीश पद पर हो अथवा न्यायाधीश पद पर रह चुका हो'।) इसमें दो प्रकार के व्यक्तियों की कल्पना की गई है। पहली कल्पना उस व्यक्ति के संबंध में है जो न्यायाधीश पद पर आसीन हो। इस संबंध में विचार-विमर्श नहीं हुआ है और किसी संशोधन पर विचार नहीं हुआ है। इसलिये इसके बारे में औचित्य-प्रश्न नहीं किया जा सकता है। जहां तक इस खंड के दूसरे भाग का संबंध है उसमें ऐसे व्यक्ति का उल्लेख है जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश रह चुका हो और उसमें यह कहा गया है कि वह किसी पद पर नियुक्त होने के लिये पात्र न समझा जायेगा इत्यादि। इसके संबंध में निस्संदेह कुछ संशोधन उपस्थित किये गये थे और वे अस्वीकार हो गये थे किन्तु डा. सेन ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसमें यह अतिरिक्त उपबंध है कि राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श लेकर उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को थोड़े समय के लिये अन्य कार्य में लगा सकता है। इसका संबंध पदासीन तथा पद

निवृत्त दोनों प्रकार के न्यायाधीशों से है। इस परन्तुक में आगे यह भी कहा गया है कि यह अनुच्छेद किसी ऐसी नियुक्ति के संबंध में प्रयोग में नहीं आयेगा जो ऐसे समय में की गई हो अथवा जारी रखी गई हो जब आपात की घोषणा प्रवर्तन में हो और जिसके संबंध में राष्ट्रपति ने यह प्रमाणित किया हो कि वह राष्ट्र के हित के लिये आवश्यक है। जब राष्ट्र आपातिक स्थिति में हो तो कुछ अपवाद करने की आवश्यकता पड़ सकती है। डा. सेन ने इसी परन्तुक का सुझाव रखा है। यह स्पष्ट है कि जिन संशोधन पर विचार हो चुका है उनसे यह आशय पूरा नहीं होता है। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि डा. सेन का संशोधन नियमित है और इस पद पर विचार किया जाना चाहिये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं थोड़े से शब्द कहकर इस विषय को समाप्त करना चाहता हूं। इसके पूर्व मैं यह बताना चाहता हूं कि यह संशोधन किस विचार पर आधृत है। इस संशोधन के मुख्य उद्देश्य को समझने के लिये हमें तीन विभिन्न प्रश्नों पर विचार करना है। पहला प्रश्न उच्चतम न्यायालय के ऐसे न्यायाधीशों का है जो कार्यपालिका के किसी पद पर नियुक्त किये गये हों और जिनको उच्चतम न्यायालय में अपने पद पर वापिस जाने का कोई अधिकार प्राप्त न हो। यह एक प्रश्न है। दूसरा प्रश्न यह है कि कोई व्यक्ति उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश पद पर आसीन रहने के पश्चात् न्याय-कार्य के अतिरिक्त कार्यपालिका का कोई कार्य कर सकता है अथवा नहीं। तीसरा प्रश्न यह है कि उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को, जो न्याय-कार्य के अतिरिक्त अन्य किसी कार्य में लगाया गया हो उच्चतम न्यायालय में अपने पद पर वापिस आने का अधिकार है या नहीं। मेरा यह विचार है और यदि वह ठीक न हो तो डा. सेन मुझे बता सकते हैं, कि इस संशोधन का संबंध तीसरे प्रश्न से है अर्थात् इससे कि उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश थोड़े समय के लिये न्याय-कार्य के अतिरिक्त अन्य किसी कार्य में लगाया जा सकता है या नहीं और उसके पश्चात् उसे उच्चतम न्यायालय में अपने पद पर वापिस आने का अधिकार है या नहीं।

पहले प्रश्न के संबंध में, जिसे मैंने पहले बताया है अर्थात् इसके संबंध में कि उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश कार्यपालिका के किसी पद पर इस शर्त पर नियुक्त किया जा सकता है या नहीं कि वह उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीश-पद को त्याग देगा मेरे विचार से उसे नियुक्त करने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती क्योंकि वह उच्चतम न्यायालय में अपने पद को हमेशा के लिये त्याग देगा।

दूसरे प्रश्न के संबंध में अर्थात् इसके संबंध में कि उच्चतम न्यायालय के किसी निवृत्त न्यायाधीश को कोई कार्य सौंपा जाये, या न सौंपा जाये हम अभी विचार कर चुके हैं। इस संबंध में कोई परिसीमा नहीं होनी चाहिये।

तीसरे प्रश्न पर, मेरी समझ से विचार करने की आवश्यकता है। इस प्रकार के दो मामले हमारे देश में हुए हैं एक मामला तो युद्ध काल में हुआ था जबकि उस समय की भारत सरकार ने संघ न्यायालय के एक न्यायाधीश को कूटनीतिक कार्य के लिये बाहर भेजा था। इस सरकार ने भी किसी उच्च न्यायालय के, जिसका नाम मुझे याद नहीं आ

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

रहा है, एक न्यायाधीश को कूटनीतिज्ञ कार्य के लिये बाहर भेजा था। दोनों अवसरों पर इन कार्यों की बड़ी आलोचना हुई थी। मेरे मित्र श्री चिम्मनलाल सीतलवाद ने टाइम्स आफ इंडिया में एक लेख प्रकाशित करवाया था जिसमें उन्होंने सरकार के इस कार्य की आलोचना की थी। उनके उन विचारों से मैं सहमत हूं। किन्तु डा. पी.के. सेन ने अपने संशोधन में जो शब्द रखे हैं उन्हें मैं इस समय स्वीकार करने में असमर्थ हूं क्योंकि या तो वे शब्द उद्देश्य का उल्लंघन करते हैं या उसकी पूर्ति ही नहीं करते। किन्तु मैं मसौदा-समिति से यह सिफारिश करने के लिये तैयार हूं कि इस विषय पर विचार किया जाये। इस आश्वासन को दृष्टि में रखते हुए मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि वे अपना संशोधन वापिस ले लें।

***श्री जसपतराय कपूर:** क्या मैं यह प्रार्थना कर सकता हूं कि इस खंड पर कल तक निर्णय न किया जाये क्योंकि हम में से कई लोग उसका ध्यानपूर्वक अध्ययन करना चाहते हैं।

***अध्यक्ष:** डा. अम्बेडकर ने हमसे कहा है कि वे उसे मसौदा-समिति के सामने ला रहे हैं।

***श्री जसपतराय कपूर:** उसे स्थगित किया जाये।

***अध्यक्ष:** जब उसे मसौदा-समिति के सामने लाया जा रहा है तो उसका अर्थ यही है कि उसे स्थगित रखा गया है क्योंकि जब वह फिर इस सभा के सामने आयेगा तो वह उस रूप में आयेगा जिसे कि मसौदा-समिति स्वीकार करेगी।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिंह** (बिहार : जनरल): इससे उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): यदि डा. अम्बेडकर किसी निश्चित प्रस्ताव को रखें तो उस पर हम यहां विचार कर सकते हैं।

***अध्यक्ष:** वह मसौदा-समिति से ऐसे रूप में सभा के सामने रखा जायेगा जिसमें यहां उठाई हुई सभी बातों का समावेश होगा।

तब हम कल प्रात: आठ बजे तक के लिये सभा स्थगित करते हैं।

इसके पश्चात् संविधान सभा बुधवार 25 मई, 1949 के
प्रात: आठ बजे तक के लिये स्थगित हो गई।